मुक्त शिक्षा

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के
शिक्षार्थियों के लिए सचेतक पत्रिका

OPEN LEARNING

An Awareness Magazine for the NIOS Learners

जनवरी–जून 2011 | January-June 2011

इस अंक में .....

- भारत रत्न सरदार बल्लभ भाई पटेलः भारत के लौह पुरुष
- भारत रत्न डॉ ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भारतीय मिसाइल कार्यक्रम के पुरोधा
- प्लास्टिक के जहर के कहर से कैसे निजात पायें
- पौधों के द्वारा पर्यावरण शुद्धिकरण (Phytoremediation)
- घातक ध्वनि प्रदूषण
- उपभोक्तावादी संस्कृति का पर्याय–इलेक्ट्रॉनिक कचरा
- पृथ्वी पर नीला सोना–पानी
- जीवन का आधारः महासागर
- आधुनिक भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग

In This Issue ....

- Your Responsibility as an NIOS Learner
- An Endeavour to Save Biodiversity
- E-learning: Pedagogical Paradigm Shift in Favour of Open and Distance Learning
- Spices in Our Diet: A Role Beyond Food Flavouring
- Jacobus Henricus van't Hoff The First Nobel Laureate in Chemistry
- The Fascinating Land of Primes
- Employment Opportunities in Agriculture Sector
- Globalization Through Education and ICT
- Carbon Trading: A Clean Project

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
National Institute of Open Schooling

Sardar Vallabhbhai Patel
(31 October 1875 – 15 December 1950)

My only desire is that India should be a good producer and no one ... should be hungry, shedding tears for food in the country.

Manpower without Unity is not a strength unless it is harmonished and ... united properly, then it becomes a spiritual power.

There is something unique in this soil, which despite many obstacles ... has always remained the abode of great souls.

—Sardar Vallabhbhai Patel

From the Chairman's Desk...

Dear Learner,

While India is on move to reach new hights of progress, the contribution of the Open and Distance Learning (ODL) system in this endeavour is also required to be taken note of the ODL programmes at the school education level are being offered by the national Instiatute of Open Schooling (NIOS) at the national level and by the State Open Schools (SOSs) at the state level.

With about 20 lakh students on its roll currently, NIOS has emerged at the largest open schooling system in the world. The open schooling programmes of NIOS are being offered by about study centres at the secondary and the stage, study centres at the secondary and the secondary stage and study centres at for providing Vocational Education and Training (VET).

In NIOS, the focus of almost all the programmes and activities is on its learners. We have been striving to ensure that distance learners of NIOS should not remain in disadvantageous situation vis-a-vis the students of the formal schooling system. The inputs in the learning system of NIOS include (i) printed self learning material, (ii) multi-channel and multi-media inputs in the form of telecast and broadcast on course related topics, (iii) Personal Contact Programmes (PCP) at the study centers for educational inputs required by the learners including Tutor Marked Assignments (TMA), increasing uses of Information and communication Technology (ICT) for benefit of learners right from admission to examination and certification, (v) Setting up of learning support centres (LSC) to care of queries of learners throughout the day and (vi) On Demand Examination System (ODES).

A single window comprehensive student Information system has been placed on NIOS web site www.nios.ac.in on-line help and response to queries of learners are available to learners through E-mail lsc@nioc.ac.in. Now NIOS is striving to put e-learning by way of virtual class room etc., into the open schoolin system. Virtual Classroom displicates the features of a real classroom on time. It enables interaction on line and use of audio and video conferencing for teaching-learning. M-learning (using mobile phone) is going to revolutionalising the education system. NIOS is planning provide mobile phone support its becomes under its education programme.

A dedicated 24 × 7 Vidya Darshan educational channel being launched in collaboration with NCERT and NIOS will prove to be extremely useful for the pre-degree level students.

In addition to the above mentioned educational print and non print inputs for the academic and vocational eduation programmes, NIOS makes available to you the half yearly "Open Learning" magazine to complement and supplement your knowledge of subjects and general knowledge. These issue of the Magazine includes articles on Maths, environmental pollution/protection, globalisation, laureates, employment opportunities, open schooling etc. I hope you will find the articles interesting and useful for addition to your knowledge. I solicit your comments and suggestions for improving the selection and presentation of content in this magazine.

(S.S. Jena)
Chairman, NIOS

अध्यक्ष की कलम से ...

प्रिय विद्यार्थी,

भारत के निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर होने के परिप्रेक्ष्य में हमें मुक्त तथा दूरस्थ शिक्षा के योगदान का भी संज्ञान लेना चाहिए। विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय राष्ट्रीय स्तर पर तथा राज्य मुक्त विद्यालय राज्य स्तर पर मुक्त तथा दूरस्था शिक्षा के कार्यक्रमों का संचालन कर रहे हैं।

एनआईओएस में लगभग 20 लाख विद्यार्थी नामांकित हैं। इतने अधिक विद्यार्थियों की संख्या के साथ एनआईओएस विश्व का सबसे बड़ा ओपन स्कूलिंग सिस्टम बन गया है। इस संस्थान के ओपन स्कूलिंग प्रोग्राम ओपन बेसिक एजूकेशन में ...... अध्ययन केन्द्रों, माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा में ..... अध्ययन केन्द्रों, तथा व्यावसायिक शिक्षा में ..... अध्ययन केन्द्रों की सहायता से चलाये जा रहे हैं।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के सभी प्रोग्रामों तथा क्रियाकलापों का केन्द्रबिन्दु इसका अपना विद्यार्थी है। हमारा यह सतत प्रयास है कि एनआईओएस का दूरस्थ शिक्षा विद्यार्थी किसी भी हालत में औपचारिक शिक्षा के विद्यार्थी से शैक्षिक input में कम न रहे।

एनआईओएस अपने विद्यार्थियों को जो शैक्षिक input देता उनमें (i) छपी हुई स्व–अधिगम सामग्री (ii) टेलीकास्ट तथा ब्रोडकास्ट द्वारा प्रदत्त बहु–आवामीय मीडिया शिक्षा सामग्री, (iii) अध्ययन केन्द्रों में व्यक्तिगत संपर्क कार्यक्रम (PCP) तथा शिक्षक अंकित मूल्यांकन पत्र (TMA) (iv) प्रवेश से लेकर सर्टिफिकेशन तक लगभग सभी क्रियाकलापों में आईसीटी (ICT) का उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ प्रयोग, (v) विद्यार्थी सहायता केन्द्र की स्थापना तथा (vi) 'जब चाहो तब परीक्षा दो' का प्रावधान, प्रमुख हैं।

एनआईओएस की वेबसाइट www.nios.ac.in पर एक बहुआयामी विद्यार्थी सूचना सिस्टम उपलब्ध है। विद्यार्थियों का विभिन्न प्रकार की जानकारी तथा सहायता lsc@nioc.ac.in पर e-mail द्वारा दी जाती है। तब एनआईओएस e–लर्निंग प्रोग्राम द्वारा वर्चुअल क्लासरूम की ओर अग्रसर हो रहा है। यह वास्तविक कक्षा–कक्ष का एक ऑन–लाइन प्रारूप है। इस विधि से ऑन–लाइन संवाद या अन्तःक्रिया संभव होते हैं और शिक्षण–अधिगम के लिए ऑडियो तथा वीडियो कांन्फ्रेसिंग का प्रावधान किया जा सकता है। मोबाइल फोन के इस्तेमाल से एम–लर्निंग शिक्षण अधिगम में क्रान्ति लाने की ओर एक सशक्त कदम लिये जाने की भी योजना है।

एनआईओएस राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) के सहयोग से एक 24 × 7 **विद्या दर्शन शैक्षिक टी वी चैनल** संचालित करने जा रहा है जो कि दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से विद्यालयी शिक्षा के विद्यार्थियों के लिये बहुत लाभदायक सिद्ध होगा।

एकेडेमिक तथा वोकेशनल शिक्षा के लिए उपरोक्त प्रकार की अध्ययन अधिगम सहायक सामग्रियां उपलब्ध कराने के अतिरिक्त एनआईओएस अपने विद्यार्थियों को **ओपन लर्निंग** पत्रिका द्वारा सामान्य ज्ञान वर्धक सामग्री प्रदान करने में चेष्टारत है। इस पत्रिका में पर्यावरण, सार्वभौमीकरण, विशिष्ट व्यक्तियों के जीवन, रोजगार संभावनाएं, मैथेमैटिक्स आदि से संबंधित 18 लेख हैं। मैं आशा करता हूँ कि एनआईओएस के विद्यार्थी इस पत्रिका के लेखों को अपना सामान्य ज्ञान बढ़ाने के लिये चाव से पढ़ेंगे। मेरा आपसे अनुरोध है कि इस पत्रिका के कलेवर को और अच्छा बनाने के लिये अपने सुझाव भेजें।

सितांशु

(एस.एस.जेना)
अध्यक्ष, एनआईओएस

विषय – सूची / Contents

1. भारत रत्न सरदार बल्लभ भाई पटेलः भारत के लौह पुरुष
   - **कमलेश मुखर्जी** 1–7

2. भारत रत्न डॉ ए.पी.जे. अब्दुल कलाम भारतीय मिसाइल कार्यक्रम के पुरोधा
   - **श्री रामशरण दास** 8–12

3. प्लास्टिक के जहर के कहर से कैसे निजात पायें
   - **रामनिवास शर्मा** 13–15

4. पौधों के द्वारा पर्यावरण शुद्धिकरण (Phytoremediation)
   - **मनीष मोहन गोर** 16–20

5. घातक ध्वनि प्रदूषण
   - **विजन कुमार पाण्डेय** 21–23

6. उपभोक्तावादी संस्कृति का पर्याय– इलेक्ट्रॉनिक कचरा
   - **डॉ. रीति थापर कपूर** 24–27

7. पृथ्वी पर नीला सोना–पानी
   - **डॉ. दीपक कोहली** 28–30

8. जीवन का आधारः महासागर
   - **नवनीत कुमार गुप्ता** 31–37

9. आधुनिक भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग
   - **डॉ सुरेश चंद्र भाटिया** 38–45

10. Your Responsibility as an NIOS Learner
   - **Dr. Rajesh Kumar** 46–49

11. An Endeavour to Save Biodiversity
   - **Dr. P.K. Mukherjee** 50–52

12. E-learning: Pedagogical Paradigm Shift in Favour of Open and Distance Learning
   - **Dr. Devendra Singh** 53–56

13. Spices in Our Diet: A Role Beyond Food Flavouring
   - **Dr. K. Srinivasan** 57-62

14. Jacobus Henricus van't Hoff The First Nobel Laureate in Chemistry
   - **Subodh Mahanti** 63–67

15. The Fascinating Land of Primes
   - **Utpal Mukhopadhyay** 68–71

16. Employment Opportunities in Agriculture Sector
   - **Dr. Harender Raj Gautam** 72–75

17. Globalization Through Education and ICT
   - **Dr. Shruti Upreti** 76–79

18. Carbon Trading: A Clean Project
   - **Dr. Roofia Khan** 80–81

DISCLAIMER

The facts and figures stated, conclusions reached and the views expressed in the articles are that of authors and the National Institute of Open Schooling is in no way responsible for their views.

संपादन मंडल / Editorial Board

- एस.एस. जेना, अध्यक्ष, एनआईओएस : मुख्य संपादक
  S.S. Jena, Chairman , NIOS : *Chief Editor*
- कुलदीप अग्रवाल, निदेशक, शैक्षिक विभाग, एनआईओएस : परामर्शदाता संपादक
  Kuldeep Agarwal, Director, Academic Department, NIOS : *Consulting Editor*
- सचिव, एनआईओएस : सदस्य
  Secretary, NIOS : *Member*
- निदेशक, वि. स. से. विभाग, एनआईओएस : सदस्य
  Director, Department of Student Support Services, NIOS : *Member*
- सी. धारूमन, निदेशक, मूल्यांकन विभाग, एनआईओएस : सदस्य
  C. Dharuman, Director, Department of Evaluation, NIOS : *Member*
- के.पी. वासनिक, निदेशक, व्यावसायिक शिक्षा विभाग, एनआईओएस : सदस्य
  K.P. Wasnik, Director, Department of Vocational Education, NIOS : *Member*
- आर. के. आर्य, संयुक्त निदेशक, मीडिया, एनआईओएस : सदस्य
  R.K. Arya, Joint Director, Media, NIOS : *Member*
- गोपा बिश्वास, संयुक्त निदेशक (शैक्षिक), एनआईओएस : सदस्य
  Gopa Biswas, Joint Director (Academic), NIOS : *Member*
- सोनिया बेहल, सहायक निदेशक (शैक्षिक), एनआईओएस : सदस्य
  Sonia Behl, Assitant Director (Academic), NIOS : *Member*
- बालकृष्ण राय, शैक्षिक अधिकारी, एनआईओएस : सदस्य
  Balkrishan Rai, Academic Officer, NIOS : *Member*
- गौरी दिवाकर, जन संपर्क अधिकारी, एनआईओएस : सदस्य
  Gowri Diwaker, Public Relation Officer, NIOS : *Member*
- राजीव प्रसाद, शैक्षिक आधिकारी (रसायन विज्ञान), एनआईओएस : संपादक
  Rajeev Prasad, Academic Officer, (Chemistry), NIOS : *Editor*

मुद्रण/Print Production

D.N. Upreti
Publication Officer, NIOS

Ram Prasad — *Technical Asstt. (Pub.) NIOS*
Ms. Bhawana — *Office. Asstt. NIOS*

Typesetting by : M/s Graphic and Data Systems

National Institute of Open Schooling (NIOS)

Why Open Schooling ?

The emergence of Open and Distance Learning (ODL) System has been a natural and phenomenal evolution in the history of educational development towards the latter half of the twentieth century. While the conventional system continues to be the mainstream of educational transaction, it has its own limitations with regard to expansion, access, equity and cost effectiveness. Major challenges that India faces today in the educational arena are:

the challenge of numbers,

the challenge of credibility, and

the challenge of quality.

The revolution brought about by the growth of Information and Communication Technology (ICT) has greatly facilitated the expansion of Open and Distance Learning (ODL) System and permitted adopting a flexible, constructivist, learner friendly and multiperspective approach to teaching learning process which is so essential for creativity, leader-ship and scholarship leading to total development of human personality and in responding appropriately to the challenges identified above.

The Open and Distance Education is a new paradigm with some elements of shift such as: From classroom to anywhere; teacher-centric to learner-centric; teacher as an instructor to teacher as a facilitator; mainly oral instruction to technology aided instruction; fixed time to anytime learning; "you learn what we offer" to "we offer what you want to learn"; education as one time activity to education as life long activity. The concerns for adoption of 'open schooling' programmes with the objective of providing "Education for All" include:

i. to provide education to those who are unable to attend conventional schools for a variety of socio-economic reasons, as well as to those who for similar reasons missed opportunities to complete school and developmental education;

ii. to meet the educational needs of differently able children;

iii. to provide wider choice of educational programmes to learners; and

iv. to provide a 'safety net' to school drop-outs so that they do not remain under-educated. Every region and state of India faces, more or less, the above mentioned educational challenges.

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

पृष्ठभूमि

एनआईओएस एक परीक्षा लेने वाला और प्रमाणपत्र प्रदान करने वाला संस्थान है और इसके प्रमाणपत्र उच्चतर शिक्षा के साथ–साथ नौकरियों के लिए प्रमुख बोर्डों और संस्थाओं द्वारा मान्यता प्राप्त हैं। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) (पूर्वतः राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय) की स्थापना नवंबर 1989 में एक स्वायत्त संगठन के रूप में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के तहत्) की गई और इसका पंजीकरण सन् 1860 के संस्था पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत हुआ। इससे पहले यह 1979 से केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सीबीएसई) की एक परियोजना के रूप में कार्य कर रहा था।

राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है और इसकी अनेक महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के मुख्य उद्देश्य हैं:

- विद्यालय स्तर पर सतत एवं विकासात्मक शिक्षा के सुअवसर प्रदान करना;
- भारत सरकार और राज्यों को परामर्श सेवाएँ प्रदान करना;
- दूरस्थ शिक्षा और मुक्त शिक्षा संबंधी सूचनाओं के प्रभावी प्रसार के लिए एक संस्था के रूप में कार्य करना;
- दूरस्थ शिक्षा प्रणाली तथा राज्य मुक्त विद्यालयों में सीखने के स्तरों की पहचान और प्रोत्साहित करने का कार्य करना; तथा
- देश में दूरस्थ और मुक्त शिक्षा प्रणाली के स्तरों को बढ़ाने के लिए मानकीय और समन्वयात्मक भूमिका निभाना।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान का मिशन

(i) शिक्षा का सार्वभौमिकीकरण

(ii) सामाजिक समता और न्याय को बढ़ावा देना, तथा

(iii) एक शिक्षित समाज का विकास करना है।

व्यापक तौर पर एनआईओएस के दोहरे उद्देश्य हैं। प्रथम उद्देश्य सतत एवं विकासात्मक स्कूली शिक्षा प्रदान करना है और दूसरा मुक्त विद्यालयी शिक्षा में स्तर वृद्धि करते हुए प्रामाणिक और समन्वयन कार्य करना है। एनआईओएस के कार्यक्रम सबके लिए खुले हैं जिनमें दरकिनार किए गए समूहों ग्रामीण युवाओं, बालिकाओं और महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, विभिन्न प्रकार से अक्षम व्यक्तियों और भूतपूर्व सैनिकों पर विशेष जोर दिया गया है।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
कार्यक्रम और गतिविधियाँ

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान को अक्तूबर 1990 में पूर्व–स्नातक स्तर तक के पाठ्यक्रमों में पंजीकृत विद्यार्थियों की परीक्षा लेने एवं प्रमाणपत्र प्रदान करने का अधिकार प्राप्त हुआ। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान ने पहली बार जनवरी 1991 में माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक परीक्षाओं का संचालन किया। इसके द्वारा प्रदत्त प्रमाणपत्रों को भारतीय विश्वविद्यालय संघ, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.), विभिन्न विश्वविद्यालयों, उच्च शिक्षा संस्थाओं, मानव संसाधन विकास मंत्रालय तथा श्रम एवं रोजगार मंत्रालय ने भी मान्यता प्रदान की है।

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान शैक्षिक, व्यावसायिक एवं जीवन समृद्धि पाठ्यक्रम प्रदान करता है। शैक्षिक पाठ्यक्रमों में प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम शामिल हैं। शैक्षिक पाठ्यक्रमों में विद्यार्थी अपनी आवश्यकताओं, रुचियों और क्षमताओं के अनुसार विषयों का चुनाव करने के लिए स्वतंत्र हैं। विद्यार्थियों को शैक्षिक विषयों के साथ–साथ व्यावसायिक विषयों को लेने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाता है जो अपने आप में एक अनोखी बात है। इससे कार्य एवं कौशलों को ज्ञान के समान ही महत्त्व प्राप्त होता है।

एनआईओएस 6 माह से 2 वर्ष की अवधि वाले व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम भी चलाता है। इसमें इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी, कृषि, गृह विज्ञान, स्वास्थ्य और परा चिकित्सा, शिक्षक प्रशिक्षण, व्यापार और वाणिज्य, कम्प्यूटर और आईटी के क्षेत्रों में लगभग 80 पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

एनआईओएस शिक्षा प्रदान करने के लिए अतिरिक्त संरचनागत सुविधाएँ प्रदान नहीं करता है बल्कि वह पब्लिक और राजकीय विद्यालयों की मौजूदा संरचनागत सुविधाएँ जब उपयोग में न हो तो उनका उपयोग करता है। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के अध्ययन केंद्रों के नेटवर्क में शैक्षिक पाठ्यक्रमों के लिए प्रत्यायित संस्थाओं (एआई) तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिए प्रत्यायित व्यावसायिक संस्थाओं (एवीआई) को शामिल किया गया है। विभिन्न प्रकार के अक्षम व्यक्तियों तथा वंचितों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बहुत सी विशेष प्रत्यायित संस्थाओं (एसएआईईडी) को भी अध्ययन केंद्र के रूप में मान्यता प्रदान दी गई है। एनआईओएस की ये प्रत्यायित संस्थाएँ देश के विभिन्न राज्यों में स्थित हैं।

बीसवीं शताब्दी की समाप्ति के बाद, एनआईओएस ने समर्पित और अनुभवयुक्त गैर सरकारी संगठनों और जिला साक्षरता समितियों के सहयोग से मुक्त बेसिक कार्यक्रम की शुरुआत करने का एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया है। यह कार्यक्रम 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों तथा 14 वर्ष से अधिक आयु के प्रौढ़ों के लिए अलग–अलग ढंग से तैयार किया गया है। इसके कारण प्राथमिक से पूर्व स्नातक स्तर तक की शृंखला पूरी होती है।

HOW TO USE NIOS STUDY MATERIAL

Dear Students,

The learning material (course material) provided to you by the NIOS has been developed by the team of experts. The material has been developed in Self Learning Mode (SLM) to help you to study independently.

Following points will give you an idea on how to make the best use of the material:

(i)	Title	:	Read the title. It will give you an idea about the contents of the lesson.
(ii)	Introduction	:	Go through it. This will introduce you to the content of the lesson.
(iii)	Objectives	:	Try to remember the objectives. These will be your achievement after you have learned the lesson.
(iv)	Content	:	Total content of the lesson is divided into sections so that you understand and master each concept before proceeding to the next section. Read the text carefully and if you require, make short notes on the margin of each page. Try to solve the given intext questions yourself and then go to next section. If you cannot do the intext questions, read them again until you can do it.At some places you will find some texts in italics and bold. This is showing the importance of those portions, you are suggested to memorise it.
(v)	Intext Questions	:	These will be objective type questions based on each section. After studying that section, try to solve those questions by yourself in the space given below the questions and then check your answers with the model answers given at the end of the lesson. This will help you to know your progress. Solve these in pencil and compare your answers with the key provided at the end. Go through the unit again, if, your answer do not match.
(vi)	What you have learnt	:	This will be the summary of the learning points of the lesson. Retain these and add your own points to this list.
(vii)	Terminal Exercises	:	There will be short and long answer type questions in this section. Try to solve them without taking the help from check your answer. After solving the questions, tally these with the check your answer.
(viii)	Check your answers	:	As explained earlier, here the answers to intext questions and terminal questions have been provided. Compare your answers with this list.

भारत का संविधान

भाग 4अ

नागरिकों के मूल कर्त्तव्य

अनुच्छेद 51 अ

मूल कर्त्तव्य–भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह–

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, प्रतिष्ठापित नीतियों, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्राता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में सँजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हो,

(च) हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्रा के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे, और

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्राों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाईयों को छू सके।

Constitution of India

Chapter IVA

Fundamental Duties of Citizens

Article 51A

Fundamental Duties - It shall be duty of every citizen of India-

(a) to abide by the Constitution and respect its ideals and institutions, the National Flag and the National Anthem;

(b) to cherish and follow the noble ideas which inspired our national struggle for freedom;

(c) to uphold and protect the sovereignty, unity and integrity of India;

(d) to defend the country and render national service when called upon to do so;

(e) to promote harmony and the spirit of common brotherhood amongst all the people of India transcending religious, linguistic and regional or sectional diversities; to renounce practices derogatory to the dignity of women;

(f) to value and preserve the rich heritage of our composite culture;

(g) to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers, wild life and to have compassion for living creatures;

(h) to develop the scientific temper, humanism and the spirit of inquiry and reform;

(i) to safeguard public property and to abjure violence;

(j) to strive towards excellence in all spheres of individual and collective activity so that the nation constantly rises to higher levels of endeavour and achievement.

भारत रत्न सरदार बल्लभ भाई पटेलः भारत के लौह पुरुष

❐ कमलेश मुखर्जी

सरदार बल्लभ भाई पटेल का व्यक्तित्व बहुत ही धैर्यवान और गंभीर किस्म का था। उन्हें कठोर व्यक्ति माना जाता था, लेकिन व्यवहार में वह बहुत नम्र, शांत और हंसी–मजाक पसंद व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व में चट्टान जैसी दृढ़ता थी। तभी वह लौह पुरुष कहलाए। बाहर से शांत होते हुए भी उनके अंदर मानो धधकता हुआ लावा भरा था। एक तरह से बर्फ से ढके हुए ज्वालामुखी जैसा ही उनका व्यक्तित्व था।

बाल्यकाल एवं शिक्षा

बल्लभ भाई का जन्म 31 अक्टूबर 1875 को गुजरात के नाडियाद नगर में अपने मामा के यहां हुआ था। उनके पिता झबेर भाई गुजरात के खेड़ा जिले के करमसद गांव के एक साधारण कृषक थे, लेकिन उनका गौरवशाली एवं वीरतापूर्ण अतीत था। उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई की सेना में भर्ती होकर 1857 में स्वाधीनता संग्राम में अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष में भाग लिया था।

बल्लभ भाई की माता का नाम लाड बाई था। वे बहुत ही धार्मिक प्रवृति की महिला थी। अपने बच्चों के चरित्र और गुणों को विकसित करने के लिए वह कृत संकल्प थी। इस तरह बल्लभ भाई को अपने माता–पिता से उच्च संस्कार विरासत में मिले थे। वह अपने माता–पिता की चौथी संतान थे। सोमा भाई, नरसी भाई और विट्ठल भाई उनसे बड़े तथा भाई काशी और बहन दहिबा उनसे उम्र में छोटे थे। बल्लभ भाई के बड़े भाई विट्ठल भाई कानून के तो प्रकांड पंडित थे ही, भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

बल्लभ भाई की शिक्षा गुजराती माध्यम से करमसद गांव से प्रारम्भ हुई। इसके बाद उन्होंने पेटलाद के एन.के. हाई स्कूल में प्रवेश लिया। दो वर्ष यहां पढ़ने के बाद उन्होंने नाडियाद हाई स्कूल में दाखिला लिया जहां से 1897 में 22 वर्ष की उम्र में मेट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की।

धन के अभाव में उनके माता–पिता उन्हें कॉलेज की शिक्षा दिलाने में असमर्थ थे। बल्लभ भाई ने 'डिस्ट्रिक्ट प्लीडर' की परीक्षा में बैठने का निश्चय किया। वकालत करने के लिए इस परीक्षा को पास करना जरूरी था।

बल्लभ भाई ने स्वावलंबन का सहारा लिया। कानून की कुछ किताबें किसी जान–पहचान के वकील से उधार मांग कर तथा कोर्ट–कचहरी में होने वाले मुकदमों की पैरवी को सुनकर उन्होंने अपने स्वावलंबन के बूते पर ही परीक्षा की तैयारी की। सन् 1900 में इस परीक्षा को पास करके वह गोधरा में वकालत करने लगे।

विवाह

पढ़ाई करने के दौरान ही 1891 में बल्लभ भाई का विवाह झवेर बाई के साथ हो गया था। तब वह सोलह वर्ष के थे। उन दिनों की रीति–रिवाज के अनुसार छोटी उम्र में ही विवाह हो जाया करते थे। लेकिन विवाह के बाद उनकी पत्नी मायके में ही रही।

रोजगार की व्यवस्था हो जाने पर बल्लभ भाई अपनी पत्नी को अपने साथ ले आए। सन् 1904 में उनकी पुत्री मणी बेन तथा 1905 में उनके पुत्र दया भाई का जन्म हुआ। बाद में उनकी पत्नी केंसर से पीड़ित हुईं तो उन्होंने उनका इलाज बंबई (अब मुंबई) के अस्पताल में कराया। लेकिन वह अपनी पत्नी को बचा न पाये। सन् 1909 में उनकी पत्नी का निधन हो गया।

❐ कमलेश मुखर्जी, 43, देशबंधु सोसाइटी, 15, पटपड़गंज, दिल्ली –110092

विदेश यात्रा और कानून की पढ़ाई

सन् 1910 में कानून की पढ़ाई करने के लिए बल्लभ भाई इंग्लैंड रवाना हो गए। कड़ी मेहनत करके वह बार–एट–लॉ की परीक्षा में बैठे। इस परीक्षा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने के लिए उन्हें पचास पौंड का नकद पुरस्कार तथा छात्रवृत्ति भी मिली। फरवरी 1913 में बैरिस्टर बनकर बल्लभ भाई भारत लौटे।

उन्होंने अहमदाबाद में अपनी वकालत शुरू की। अपनी कानूनी योग्यता और परिश्रम के बूते पर बल्लभ भाई खूब धन कमाने लगे। वह कीमती कपड़े पहनते और ठाट–बाट से रहते। उन्होंने गुजरात क्लब, जिसमें केवल धनी और अभिजात लोग ही जा सकते थे, की सदस्यता ले ली। इस क्लब में उनका नियमित आना–जाना होता रहता। यहां अपने दोस्तों के साथ वह अक्सर ब्रिज खेलते।

गांधीजी का प्रभाव

अहमदाबाद क्लब में गांधीजी कई बार व्याख्यान देने के लिए आते थे। अपने व्याख्यान में गांधीजी आत्मशक्ति, अहिंसा तथा सत्याग्रह के मूल्यों पर जोर देते और कहते कि ब्रिटिश सरकार तथा उनके अन्याय का विरोध अहिंसात्मक ढंग से किया जाना चाहिए।

शुरू में बल्लभ भाई ने गांधीजी के बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। लेकिन बार–बार गांधीजी को सुनकर वह उनके विचारों और निष्ठा से प्रभावित हुए बिना न रह सके। वह गांधीजी के अनुयायी बन गए।

खेड़ा सत्याग्रह

सन् 1918 में खेड़ा जिला के किसानों को भारी प्राकृतिक विपदा झेलनी पड़ी। भारी वर्षा से आई बाढ़ ने जो तबाही मचाई थी उसने उनकी फसल, पशु और चारे को नष्ट कर दिया था और वे दाने–दाने के मोहताज हो गए थे। ऐसे में भूमि–कर चुका पाना उनके सामर्थ्य से बाहर की बात थी। किसान टोलियों में आकर गांधीजी से मिले और उनसे सहायता की अपील की।

गांधीजी के कहने पर बल्लभ भाई ने किसानों की ओर से सरकार को एक आवेदन पत्र दिया जिसमें भूमि–कर एकत्र करने को स्थगित करने की प्रार्थना की गई थी। लेकिन सरकार ने इस प्रार्थना पत्र को अस्वीकार कर दिया।

गांधीजी के आदेश पर बल्लभ भाई ने किसानों को सरकार से लड़ने के लिए संगठित किया। शांतिपूर्ण ढंग से कर न देने का अभियान शुरू हुआ। कर न अदा करने पर सरकार ने किसानों की जमीन–जायदाद और मवेशियों को जब्त कर लिया। लेकिन किसान अड़े रहे। सब कष्टों को झेलकर भी उन्होंने हार नहीं मानी।

उनके दृढ़ संकल्प के आगे सरकार को अंततः झुकना पड़ा। खेड़ा संघर्ष सफल हुआ और किसानों की जीत हुई। गांधीजी के सत्याग्रह के सिद्धांत को अमल में लाकर ही बल्लभ भाई को इसमें सफलता मिली थी। वह गांधीजी के कायल हो गए और उनका और भी सम्मान करने लगे।

बल्लभ भाई ने 1919 में गांधीजी द्वारा चलाए जा रहे असहयोग आंदोलन में भी भाग लिया। गांधीजी के चरखा कातने से प्रभावित होकर बल्लभ भाई भी चरखा कातने लगे। उन्होंने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार में हिस्सा लिया। लोगों को विदेशी वस्त्रों की सार्वजनिक रूप से होली जलाने के लिए उन्होंने कहा। स्वयं अपनी टोपी और जैकेट को आग के हवाले कर उन्होंने सबके लिए उदाहरण पेश किया।

बारदोली आंदोलन

सन् 1928 में सरकार ने बारदोली के किसानों का भूमि–कर बढ़ा दिया। इस अनुचित बढ़ोतरी के विरोध में बल्लभ भाई के नेतृत्व में बारदोली के किसानों ने शांतिपूर्ण और अहिंसात्मक ढंग से अपना आंदोलन शुरू किया। उन्होंने सरकार को कर देने से मना कर दिया।

सरकार ने किसानों की जमीन, मवेशी तथा अन्य संपत्ति को जब्त कर लिया। इससे किसानों को घोर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा लेकिन हिम्मत न हारकर उन्होंने अपना शांतिपूर्ण संघर्ष जारी रखा। अंततः सरकार को

झुकना पड़ा और किसानों की मांगें मान ली गईं। उनकी जब्त की गई जमीन–जायदाद और पशु आदि भी उन्हें लौटा दिए गए और बढ़े हुए कर को भी वापस कर दिया गया।

सरकार के शोषण के विरुद्ध किया गया बारदोली आंदोलन सफल रहा। गांधीजी ने इसका पूरा श्रेय बल्लभ भाई को दिया और उन्हें 'सरदार' यानी नेता की उपाधि से विभूषित किया। इस तरह बारदोली आंदोलन के नायक बल्लभ भाई सरदार बल्लभ भाई पटेल बन गए।

नमक सत्याग्रह में गिरफ्तार

मार्च 1930 में गांधीजी ने साबरमती आश्रम से डांडी की 320 किलोमीटर की पैदल यात्रा की। इस यात्रा के बाद गांधीजी ने डांडी के समुद्र तट पर नमक बनाया। नमक पर तब सरकार का एकाधिकार था और केवल सरकार ही नमक बना सकती थी।

गांधीजी ने नमक बनाकर सविनय अवज्ञा आंदोलन (Civil Disobedience Movement) की शुरूआत की। इस आंदोलन को नमक सत्याग्रह का नाम भी दिया जाता है।

इस सत्याग्रह में और नेताओं के साथ सरदार पटेल भी गिरफ्तार हुए। मार्च 1931 में जब गांधी–इर्विन समझौते के साथ नमक सत्याग्रह समाप्त हो गया तब और नेताओं के साथ सरदार पटेल को भी जेल से रिहा कर दिया गया।

सन् 1931 में सरदार पटेल कांग्रेस के कराची अधिवेशन के अध्यक्ष बने। इसी वर्ष गोलमेज कांफ्रेंस में भाग लेने के लिए गांधी जी बंबई (अब मुंबई) से जहाज द्वारा लंदन के लिए रवाना हुए। लेकिन यह गोलमेज कांफ्रेंस असफल रही। सन् 1932 में जब गांधीजी लंदन से भारत लौटे तो उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। सरदार पटेल, पंडित नेहरू तथा अन्य नेताओं को भी गिरफ्तार किया गया।

यरवदा जेल में

गांधीजी और सरदार पटेल को पूना (अब पुणे) की यरवदा जेल में रखा गया। जेल में रहते हुए नवंबर 1932 को सरदार पटेल की माता का देहांत हो गया। लेकिन मां के अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए उन्होंने शर्तों पर रिहा होने से इनकार कर दिया।

अक्टूबर 1933 में विएना में उनके बड़े भाई विट्ठल भाई का भी निधन हो गया। उनके पार्थिव शरीर को दाह संस्कार के लिए बंबई लाया गया।

अपने बड़े भाई की मृत्यु पर सरदार पटेल को बहुत दुख हुआ। हालांकि दोनों भाइयों के राजनीतिक विचारों में अंतर था लेकिन दोनों के बीच प्रगाढ़ स्नेह एवं सम्मान का रिश्ता था। बावजूद इसके अपने बड़े भाई के अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए उन्होंने पैरोल पर रिहा होने से मना कर दिया।

सविनय अवज्ञा आंदालेन खत्म हो जाने पर सभी नेताओं को रिहा कर दिया गया। लेकिन सरदार पटेल कुछ और दिनों तक जेल में रहे। बाद में अस्वस्थता के कारण पटेल को भी 1934 में जेल से रिहा कर दिया गया।

भारत छोड़ो आंदोलन

8 अगस्त 1942 को ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी की बंबई में गोष्ठी हुई। इस गोष्ठी में मध्य रात्रि को 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास किया गया।

अगली सुबह सरदार पटेल, पंडित नेहरू तथा अन्य गणमान्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया तथा उन्हें अहमदनगर किले में नजरबंद रखा गया। द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो जाने के बाद 15 जून 1945 को सरदार पटेल तथा अन्य नेताओं को जेल से रिहा कर दिया गया।

अंतरिम सरकार की स्थापना

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद अंग्रेज सरकार ने महसूस किया कि भारत पर अब और अधिक समय तक अपना आधिपत्य बनाए रखना कठिन है। कूटनीति के तहत भारतीय नेताओं से बातचीत करने के लिए 23 मार्च 1946 को क्लीमेंट एटली के नेतृत्व में एक ब्रिटिश

कैबिनेट मिशन को भारत भेजा गया। मिशन के प्रस्तावों में एक प्रस्ताव अंतरिम सरकार की स्थापना करना भी था।

सितंबर 1946 में जब अंतरिम सरकार बनी तो पं. जवाहरलाल नेहरू को प्रधानमंत्री बनाया गया। सरदार पटेल को गृह मंत्रालय और सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय का कार्यभार सौंपा गया।

15 अगस्त 1947 को जब भारत स्वतंत्र हुआ तो सरदार पटेल स्वाधीन भारत के प्रथम उप–प्रधानमंत्री बने। गृह और सूचना एवं प्रसारण मंत्रालयों, जो उनके पास पहले से ही थे, के साथ–साथ उन्हें रियासती मामलों का मंत्रालय (Ministry of States) भी सौंपा गया।

रियासतों का भारत संघ में विलय

स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले राजनीतिक दृष्टि से भारत दो भागों में बटा हुआ था। एक भाग पर ब्रिटिश शासन का था जो ब्रिटिश भारत कहलाता था जबकि दूसरे भाग में अनेक देशी रियासतें थीं जिन पर राजा–महाराजाओं और नवाबों आदि का शासन था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ब्रिटिश भारत तो भारत संघ बन गया लेकिन इन देशी रियासतों के बारे में कोई भी निर्णय नहीं लिया गया। इनके शासक चाहे तो भारत या पाकिस्तान किसी में भी शामिल हो सकते थे या अपनी अलग सत्ता भी बनाए रख सकते थे। ऐसी रियासतों की संख्या 550 से भी अधिक थी।

देश की अखंडता और एकता की खातिर इन रियासतों का भारत संघ में विलय किया जाना आवश्यक था। सरदार पटेल ने इन रियासतों के शासकों को भारत संघ के साथ विलय होने की अपील की। जूनागढ़ के नवाब और हैदराबाद के निजाम के साथ भी उन्होंने बातचीत की। पहले उनकी मंशा भारत संघ के साथ विलय होने की नहीं थी। लेकिन कुछ कूटनीति और कुछ सख्ती का सहारा लेकर उन्होंने इन विवादग्रस्त रियासतों के मामले को भी दृढ़ता से निपटाया। इस भगीरथ कार्य में उन्हें सफलता मिली। विनम्रता लेकिन दृढ़ता के साथ उन्होंने यह कार्य संपन्न किया। तभी उन्हें लौह पुरुष की संज्ञा मिली।

भारत संघ के साथ रियासतों के एकीकरण का कार्य बिना किसी खून–खराबे के सरदार पटेल के कारण ही शांतिपूर्ण ढंग से हो पाया। महात्मा गांधी ने उनके इस कार्य की प्रशंसा करते हुए कहा कि भारत संघ के साथ रियासतों को मिलाने के दुष्कर कार्य को सरदार पटेल ने पूरी दृढ़ता एवं कुशलता से अंजाम दिया।

कुशल प्रशासक

एक दूरदर्शी नेता होने के साथ–साथ सरदार पटेल एक कुशल प्रशासक भी थे। विभिन्न मंत्रालयों के कार्य को उन्होंने दक्षता एवं कुशलतापूर्वक संभाला।

सरदार पटेल सरकारी नौकरी के महत्व को जानते थे। उन्हीं के सद्प्रयासों और दूरदर्शिता के चलते ही भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और अन्य केंद्रीय सेवाएं चलाई गई। वह चाहते थे कि योग्य व्यक्ति ही इन सेवाओं के लिए चुने जाएं। उनका मानना था कि राष्ट्रीय एकता को बनाए रखने में इन सेवाओं की महती भूमिका हो सकती है।

15 दिसंबर 1950 को हृदयाघात से भारत के लौह पुरुष का बंबई (अब मुंबई) में निधन हो गया। पूरे देश में शोक का वातावरण छा गया। हजारों लोगों ने उनकी शव यात्रा में भाग लिया। **भारत सरकार ने उन्हें देश के सर्वोच्च सम्मान 'भारत रत्न' की उपाधि से विभूषित किया।**

राष्ट्रीय एकता के शिल्पी, आधुनिक भारत के निर्माता तथा अनेकता में एकता के सूत्रधार के रूप में सरदार पटेल को हमेशा याद किया जाता रहेगा।

सरदार बल्लभ भाई पटेल के कुछ रोचक तथा प्रेरक प्रसंग

बचपन की बहादुरी

सरदार पटेल जब बहुत छोटे थे, उनकी कांख (बगल) में एक फोड़ा हुआ। इसमें मवाद पड़ जाने के कारण

उनकी तकलीफ बहुत बढ़ गई थी। गांव में एक व्यक्ति था जो गरम लोहे से फोड़ों को दागता था। पटेल उस व्यक्ति के पास पहुंचे। उसने फोड़े को दागने के लिए लोहे को भट्टी पर रख दिया। लोहा गर्म हो गया। लेकिन बालक की उम्र को देखकर गर्म लोहे से फोड़े को दागने की उसे हिम्मत नहीं पड़ रही थी।

यह देखकर पटेल से न रहा गया। वह जोर से बोल पड़े, "आप किसलिए इंतजार कर रहे हैं? लोहा ठंडा हो जाएगा। चलिए, जल्दी से फोड़े को दाग दीजिए।"

सुनकर वह व्यक्ति और भी खौफ से भर उठा। पटेल ने आव देखा न ताव, गर्म लोहे को उठाकर उससे आनन–फानन में उन्होंने फोड़े को दाग दिया।

यह दृश्य देखकर वहां मौजूद लोगों की मुंह से चीखें निकल गईं। लेकिन पटेल के चेहरे पर दर्द के कोई भी लक्षण नहीं थे। लोग उस छोटी उम्र में बालक की बहादुरी को देखकर दांतों तले अंगुली दबाने लगे।

अध्यापक को चुनाव जिताया

नाडियाद हाई स्कूल में जाने से पहले सरदार पटेल पेटलाद के एन.के. हाईस्कूल में दो वर्ष पढ़े थे। इस स्कूल में सरदार पटेल ने संगठित करने की क्षमता का परिचय दिया।

इस स्कूल के एक अध्यापक जो बहुत ही विद्वान थे तथा जिनका छात्र बहुत सम्मान करते थे, एक बार स्थानीय नगर पालिका के चुनाव में खड़े हुए। गुणी और सम्मानित होने के बावजूद यह अध्यापक बहुत गरीब थे जबकि उनका विपक्षी एक अमीर व्यवसायी था। उसे अपनी जीत पर पूरा भरोसा था।

सरदार पटेल जानते थे कि उनके अध्यापक अपने विपक्षी के मुकाबले अधिक काबिल उम्मीदवार हैं। लेकिन साथ–साथ वह यह भी जानते थे कि उनके पास जीतने के साधन नहीं हैं। इसलिए सरदार पटेल ने चुनाव अभियान का सारा जिम्मा अपने ऊपर ले लिया। उनके आह्वान पर उनके साथी छात्र इस अभियान में सहयोग देने के लिए सहर्ष राजी हो गए।

पटेल के साथ छात्रों की टोली चुनाव अभियान के लिए निकली। उन्होंने सभी मतदाताओं से संपर्क साधा और अध्यापक के पक्ष में वोट डालने की उनसे जोरदार अपील की। इस सारी सरगर्मी का नतीजा यह निकला कि वह अध्यापक चुनाव जीत गए। चुनाव में मिली जीत ने सरदार पटेल की संगठित करने की क्षमता को प्रदर्शित किया जो बाद में उनके राजनीतिक जीवन का प्रतीक बनी।

अध्यापक को सीख

जहां सरदार पटेल ने एक अध्यापक को चुनाव में जिताया था वहीं छात्रों के साथ होने वाले अन्याय के विरोध में एक अध्यापक के खिलाफ खड़े भी हुए थे।

घटना तब की है जब सरदार पटेल नाडियाद हाई स्कूल में पढ़ते थे। इस स्कूल के एक अध्यापक की पुस्तकों की एक दुकान थी। वह सभी छात्रों को अपनी दुकान से ही पुस्तकें खरीदने के लिए बाध्य करते थे। जो छात्र ऐसा न करता उसे वह तरह–तरह के उलाहने देते।

सरदार पटेल को अध्यापक का यह व्यवहार गलत लगा। उन्होंने अपने साथियों के साथ मशविरा किया। तय हुआ कि उन अध्यापक की कक्षा का सभी छात्र बहिष्कार करेंगे। पूरे एक हफ्ते तक बहिष्कार का कार्यक्रम चला। उन अध्यापक महोदय को अपनी गलती का एहसास हुआ। इसके बाद किसी भी छात्र को अपनी दुकान से पुस्तक खरीदने के लिए उन्होंने कभी बाध्य नहीं किया।

कर्त्तव्य भावना ही सर्वोपरि

एक बार सरदार पटेल कोर्ट में किसी मुकदमे की पैरवी कर रहे थे। वह न्यायाधीश के आगे बड़े मनोयोग से अपने तर्कों को प्रस्तुत कर रहे थे। ऐसे में अचानक किसी ने आकर उनके हाथ में एक टेलीग्राम थमाया। उन्होंने जल्दी से इस टेलीग्राम को पढ़ा और फिर मोड़कर उसे अपनी जेब में रख लिया। उन्होंने अपनी पैरवी जारी रखी।

पैरवी समाप्त कर जब वह कुर्सी पर बैठे तब जाकर ही उस टेलीग्राम में लिखे संदेश का उनके आसपास बैठे लोगों को पता चला। टेलीग्राम में उनकी पत्नी के निधन की सूचना थी। पटेल इसको पढ़ चुके थे। लेकिन फिर भी उन्होंने मुकदमे की पैरवी को जारी रखी मानो जैसे कुछ हुआ ही न हो।

कर्त्तव्य की भावना ही सरदार पटेल के लिए सर्वोपरि थी। परेशानियों और मुसीबतों से उनका मनोबल कभी टूटा नहीं। तभी उन्हें सौंपे गए सभी कार्यों को वह लौह सदृश संकल्प और इच्छा शक्ति से अंजाम दे पाते थे।

जेल के अंदर मच्छरदानियों की व्यवस्था

अक्टूबर 1940 में गांधीजी ने व्यक्तिगत रूप से सत्याग्रह (Self disobedience) करने की योजना बनाई। इस सत्याग्रह में भाग लेने के लिए कुछ नेताओं को गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया गया। इनमें सरदार पटेल भी थे।

जेल के अंदर मच्छरों का भारी प्रकोप था। सरदार पटेल ने जब जेलर से मच्छरदानियों की मांग की तो उसने इन्हें उपलब्ध कराने में अपनी असमर्थता व्यक्त की।

जेलर की बात सुनकर पटेल मन ही मन क्षुब्ध हुए। लेकिन बाहर से वह शांत बने रहे। धीर–गंभीर स्वर में बोले, ''जनाब, जेल में अपनी मर्जी से नहीं आया हूं। मुझे यहां लाया गया है। जेलर होने के नाते मच्छरदानियों की व्यवस्था करना आपका कर्त्तव्य है। अगर आप मच्छरदानियों की व्यवस्था नहीं कर सकते तो हमें जेल से बाहर जाने दें। जब मच्छरदानियों की व्यवस्था हो जाए तो हमें बुला लीजिएगा, हम खुशी–खुशी जेल लौट आयंगे।''

विनम्रता लेकिन दृढ़ता से कही गई पटेल की बात सुनकर जेलर सहम गया। कहना न होगा कि कुछ ही समय के अंदर जेल के सभी कैदियों के लिए उसने मच्छरदानियों की व्यवस्था करवा दी।

उस्तरे से कैदियों की दाढ़ी बनाने की पेशकश

सरदार पटेल तब पूना (अब पुणे) की यरवदा जेल में थे। जेल में इस्तेमाल के लिए उनके कुछ मित्रों ने उन्हें उस्तरा भेंट किया। लेकिन जेल के अधिकारियों ने उन्हें इसके इस्तेमाल की इजाजत नहीं दी। यह पटेल को दिल से नागवार गुजरा। लेकिन अपने स्वर में हास्य का पुट लाकर वह बोले, ''आखिर आप मुझे यह उस्तरा इस्तेमाल करने क्यों नहीं देते? मैं चाहता हूं कि इससे सभी कैदियों की दाढ़ी बनाऊं। इससे मुझे जेल में काम करने का मौका मिलगा और मेरा समय कट जाएगा।''

सुनकर वहां मौजूद सभी लोगों की बरबस हंसी छूट गई। बेशक बाहर से पटेल धीर–गंभीर और कठोर लगते थे, लेकिन अपने व्यवहार में हास्य–व्यंग्य के पुट को ले आने में वह माहिर थे। अपने निकट जनों को हंसी–मजाक का माहौल देकर वह उनके गमों को भुलाने में मदद करते थे।

सादगी भरा प्रेरणादायक व्यक्तित्त्व

सरदार पटेल का समग्र जीवन प्रेरणादायक है। वह एक गरीब परिवार में पैदा हुए थे। उनके माता–पिता की समस्त आशाएं अपने दोनों बड़े बेटों सोमा और नरसी पर टिकी थीं। तथा अपने स्नेह को अधिकांश रूप से वह अपने छोटे बेटे काशी ओर इकलौती बेटी दहिबा पर ही न्यौछावर करते थे। ऐसे में सरदार पटेल और उनके बड़े भाई विट्ठल भाई, जो बीच की संतान थे, को सब्र से ही काम लेना पड़ता था। बच्चों में मिठाई बंटती या उनको नए कपड़े दिलवाए जाते तो सरदार पटेल और विट्ठल भाई की बारी सबसे आखिर में ही आती थी।

जब सरदार पटेल पेटलाद के स्कूल में पढ़ते थे तो अपना भोजन खुद पकाते थे। रसोई के सामान को हर सप्ताह अपने घर से पेटलाद पैदल चलकर ही ले जाते थे। वह ट्रेन द्वारा आ–जा सकते थे लेकिन उनके पास रेल के टिकट के लिए पैसे नहीं थे।

बचपन से ही घर–बाहर विकट एवं कठिन परिस्थितियों को झेलने के कारण न केवल उनके व्यक्तित्व में एक दृढ़ता आ गई थी बल्कि उनके अंदर इससे एक प्रबल मानसिक शक्ति एवं आत्मविश्वास का विकास भी हुआ था। तभी वह लौह पुरुष कहलाए।

सरदार पटेल उन ईमानदार नेताओं में से थे जिन्होंने अपने लिए न तो कोई संपत्ति बनाई और न कोई धन जमा किया। सार्वजनिक संपत्ति में से एक पैसे को भी उन्होंने कभी हाथ नहीं लगाया। अपने पुत्र दया भाई तथा बेटी मनी बेन को भी सादगी भरा जीवन जीने के लिए प्रेरित किया। इस बारे में एक प्रेरक प्रसंग का यहां उल्लेख करना उपयुक्त होगा।

एक बार राष्ट्रनेता महावीर त्यागी गृहमंत्री निवास पर सरदार पटेल से मिलने के लिए आए। उनकी पुत्री मणीबेन महावीर जी के लिए पानी लाई। मणीबेन की साड़ी पर पैबंद देखकर महावीर त्यागी हैरान होकर बोले, ''आश्चर्य! भारत के गृहमंत्री की पुत्री की साड़ी में इतने पैबंद?''

सुनकर मणीबेन ने विनम्रतापूर्वक जवाब दिया, ''इसमें आश्चर्य कैसा चाचाजी! चरखे पर कातकर तैयार खादी से पिताजी के वस्त्र बन जाते हैं और उनके द्वारा धारण किए गए वस्त्रों से बाद में मेरे लिए साड़ी बन जाती है।''

सादगी भरे जीवन की इससे बढ़कर और क्या मिसाल हो सकती है। सचमुच सरदार पटेल जैसे ईमानदार, कर्त्तव्यनिष्ठ और दृढ़ इच्छा शक्ति वाले नेताओं की आज देश को बहुत आवश्यकता है।

❐

सच्ची विद्या उस समय आरम्भ होती है, जब मनुष्य समस्त बाहरी सहारों को छोड़कर अपनी अन्तरंग अनन्तता की ओर ध्यान देता है। वह समय मानों यह मौलिक ज्ञान का एक स्वाभाविक स्रोत बन जाता है अथवा महान् नवीन नूतन विचारों का चश्मा बन जाता है।

स्वामी रामतीर्थ (रामहृदय, पृष्ठ 148)

सच्ची विद्या का पूर्ण उद्देश्य लोगों से ठीक काम कराना ही नहीं, वरन् ठीक कामों में आनन्द लेना सिखलाना है, केवल परिश्रमी बनाना ही नहीं, वरन् परिश्रम से प्रेम करना सिखलाता है।

स्वामी रामतीर्थ (रामहृदय, पृष्ठ 149)

भारत रत्न
डॉ ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
भारतीय मिसाइल कार्यक्रम के पुरोधा

❐ श्री रामशरण दास

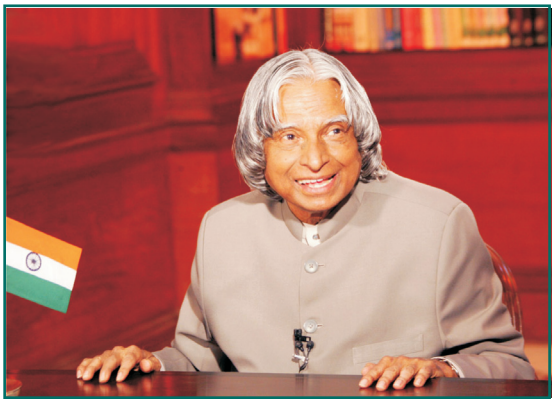

आज अपना देश भारत विश्व की बड़ी परमाणु शक्तियों में से एक है। अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में हमारी उपलब्धियां हमें विकसित देशों के समकक्ष ले जाती हैं, तथा मिसाइल प्रक्षेपण के मामले में हमने इतना तकनीकी विकास कर लिया है कि सिर्फ तीन देश ही हमसे आगे हैं। परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष विज्ञान और मिसाइल निर्माण–इन तीनों क्षेत्रों में हमारी अप्रतिम प्रगति के लिए जिस एक व्यक्ति के समर्पित जीवन और कुशल नेतृत्व का सबसे अधिक योगदान है, उनका नाम है– अब्दुल पाकिर जैनुलब्दीन अब्दुल कलाम।

संघर्षमय बचपन

ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर 1931 को धनुषकोटि, रामेश्वरम् (तमिलनाडु) के एक मछुआरा परिवार में हुआ। उनके पिता जैनुलब्दीन मरकयार पढ़े–लिखे तो नहीं थे, पर अपनी ईमानदारी, होशियारी, उदारता एवं आत्मानुशासन के लिए प्रसिद्ध थे। माता आशियम्मा पढ़ी–लिखी धार्मिक विचारों की महिला थीं। अब्दुल कलाम की बचपन से ही पढ़ने में अनुरक्ति थी। इसलिए माता–पिता ने भी उनको पढ़ाई की सुविधा देने की पूरी कोशिश की। प्राथमिक शिक्षा के लिए उन्हें सामियार स्कूल रामेश्वरम् में भर्ती कराया गया। फिर श्वार्ट्ज हाईस्कूल रामनाथपुरम् से दसवीं और 1950 में सेंट जोजेफ कालेज त्रिचुरापल्ली से विज्ञान में स्नातक परीक्षा पास की।

अब्दुल कलाम के जन्म के कुछ वर्ष बाद ही परिवार की आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। उनके पिता की कुछ नावें धनुषकोटि से रामेश्वरम् के बीच किराये पर चलती थीं। लेकिन एक चक्रवात में वह सब नावें बह गई और परिवार की आय का साधन समाप्त हो गया। ऐसे में अब्दुल कलाम की पढ़ाई की फीस जुटाना भी मुश्किल हो गया। कठिनाई के उस समय में पूरे परिवार ने एकजुट रहकर जीवन जिया। बालक अब्दुल कलाम ने भी अपने बूते के हिसाब से परिवार की आय बढ़ाने के लिए योगदान किया। फिर बचपन में गलियों से इमली के बीज बीनकर एक आना रोज कमाना हो, या स्कूल के दिनों में चचेरे भाई शमसुद्दीन के लिए रेल से अखबार उठाना और बांटना हो या फिर कॉलेज की फीस जुटाने के लिए ट्यूशन पढ़ाना-सब कुछ किया अब्दुल कलाम ने।

आसमानों में उड़ने की आशा

बचपन में पंक्ति बनाकर आसमान में उड़ते जल–पक्षियों को देखना नन्हे अब्दुल को बहुत अच्छा लगता था। उसका भी मन आकाश में उड़ने के लिए मचल–मचल जाता। बचपन से मन में बसे उस सपने को पूरा करने

❐ श्री रामशरण दास, (पूर्व एस.ई.ओ., एनआईओएस), सैक्टर–4, मकान नं. 49, वैशाली, गाजियाबाद–201010 (उ.प्र.)

के लिए बी.एस.सी. के बाद मद्रास तकनीकी संस्थान में उड्डयन अभियांत्रिकी कोर्स के लिए प्रार्थना पत्र दिया। योग्यता के आधार पर प्रवेश की स्वीकृति तो मिली पर फीस कहाँ से आये? तब बहन जोहरा ने अपनी सोने की चूड़ियाँ और चेन गिरवी रखकर फीस की व्यवस्था की।

त्याग, तपस्या, प्रेम–तीन सूत्रों से सधी जिंदगी

उड्डयन अभियांत्रिकी में बहुत अच्छे अंकों से स्नातक परीक्षा पास करने के बाद अब्दुल कलाम ने दो स्थानों पर रिक्त पदों के लिए आवेदन किया– भारतीय वायुसेना में और रक्षा मंत्रालय के तकनीकी विकास और निर्माण निदेशालय (DTD and P) में। उनकी दिली इच्छा थी कि वायुसेना में उनकी नियुक्ति हो जाय, पर पैनल में उनका नंबर नवां रह गया जबकि आठ पद भरे जाने थे। हाँ, DTD & P में 250 रु. प्रतिमाह के मूलवेतन पर, वरिष्ठ वैज्ञानिक सहायक के रूप में नियुक्ति का पत्र उन्हें मिल गया। यहाँ, एकदम अनजानी तकनीक पर काम करते हुए उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर, हॉवरक्राफ्ट–'नन्दी' का निर्माण किया।

1962 में, अन्तरिक्ष अन्वेषण के लिए भारतीय समिति (INCOSPAR) बनी तो डा. विक्रम साराभाई और एम. जी.के. मेनन ने डॉ. कलाम को रॉकेट इंजिनियर के रूप में नियुक्त किया। यहीं से उन्हें 4 महीने के एक प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए NASA जाने और विभिन्न अन्तरिक्ष अनुसंधान केन्द्रों को देखने का अवसर मिला। नासा से लौटते ही उन्हें रॉकेट संयोजक एवं सुरक्षा विभाग का अध्यक्ष बना दिया गया और शीघ्र ही उनके नेतृत्व में Nike Apache नाम का नन्हा रॉकेट सफलतापूर्वक प्रक्षेपित किया गया।

भारतीय अन्तरिक्ष शोध संगठन (ISRO) के गठन के साथ ही कलाम भारतीय रॉकेट विकास कार्यक्रम से जुड़ गये। SLV-3, रोहिणी साऊन्डिंग रॉकेट (RSR), रॉकेट एडेड टेक ऑफ (RATO) तकनीक, फाईबर रिइन्फोर्स्ड प्लास्टिक (FRP) का विकास, इस काल में उनके नेतृत्व में हुई इसरो की विशेष उपलब्धियाँ हैं।

1982 में, डॉ. बी.एस. अरुणाचलम् ने, जो उस समय रक्षामंत्री के सलाहकार तथा रक्षा शोध एवं विकास संगठन (DRDO) के अध्यक्ष थे, श्री कलाम की कार्य एवं नेतृत्व क्षमता को देखते हुए उन्हें हैदाराबाद स्थित रक्षा शोध एवं विकास प्रयोगशाला का निदेशक बना दिया। यहाँ उन्होंने इन्टिग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डवलपमेंट प्रोग्राम (IGMDP) पर ध्यान लगाया और पृथ्वी, आकाश, त्रिशूल, नाग एवं अग्नि नामक पांच मिसाइलों का विकास किया।

श्री कलाम ने सभी संवदेनशील सरकारी तकनीकी संस्थानों के शीर्ष पदों पर रह कर कार्य किया जिनमें तकनीकी सूचना, पूर्वानुमान एवं मूल्य निर्धारण परिषद (TIFAC) का अध्यक्ष पद एवं भारत सरकार के मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार का पद भी शामिल है। वह जहाँ भी रहे अपने सरल आत्मीय व्यवहार, अनवरत कार्य साधना एवं कुशल नेतृत्व क्षमता के कारण विभाग में नई जान फूंकने और निर्धारित समय–सीमा से पूर्व लक्ष्य प्राप्त करने में सफल हुए।

एक श्रेष्ठ वैज्ञानिक, कुशल डिजाइनर, समर्पित उत्पाद –अभियांत्रिक, सफल प्रशासक, प्रवीण तकनीकी प्रबंधक कलाम बहुत ही सरल हृदय व्यक्ति हैं, जो अपने काम में इतने डूब जाते हैं कि कभी–कभी अपने आप को और अपने परिवार को भी भूल जाते हैं।

श्री कलाम अविवाहित हैं। उनके बड़े भाई कासिम मरकयार के अनुसार कार्य व्यस्तता के कारण ही उनकी शादी न हो सकी। ऐसे ही रक्षा अनुसंधान और विकास प्रयोगशाला के निदेशक के रूप में दिन भर व्यस्त कार्यक्रम में वे पुत्री जैसी अपनी भांजी जमीला की शादी का दिन भूल गये और जब याद आया तो पहुंचने का कोई व्यवहारिक साधन उनके पास नहीं था।

लगन के पक्के

चुनौती मिलते ही श्री कलाम के अन्दर की सारी शक्तियाँ जैसे एकजुट होकर कार्यरत हो जाती हैं।

स्कूल के दिनों में इधर–उधर बेकार घूमते देख गणित के अध्यापक श्री रामकृष्ण अय्यर ने अब्दुल कलाम की बेंत से पिटाई की तो अगली त्रैमासिक परीक्षा में 100 प्रतिशत अंक लाकर उन्हीं श्री अय्यर ने प्रातः कालीन सभा में यह गर्वोक्ति करने का अवसर दिया कि जिसको उनकी बेंत पड़ी वही सफलता के रास्ते पर चल पड़ा।

मद्रास तकनीकी संस्थान में भी ऐसी ही एक घटना घटी। डिजाइनिंग के प्राध्यापक श्री श्रीनिवास ने हवाई जहाज की प्रणोदन प्रणाली, संरचना, नियंत्रण और यंत्र प्रणाली के डिजाइन बनाने का प्रकल्प दिया। अब्दुल कलाम ने जो डिजाइन प्रस्तुत किये उन्हें प्रोफेसर श्रीनिवास ने निराशाजनक पाया और धमकी दी कि यदि तीन दिन के अन्दर उचित डिजाइन प्रस्तुत नहीं किये तो उन्हें मिलने वाली छात्रवृत्ति बन्द कर दी जाएगी। अब्दुल कलाम ने रात भर जागकर काम किया और निर्धारित समय सीमा से पहले ही नये डिजाइन प्रो. श्रीनिवास को पेश किये। प्रो. श्रीनिवास ने अब्दुल कलाम को एक असंभव समय सीमा में श्रेष्ठ कार्य करने के लिए बधाई दी।

SLV-3 का पहला प्रक्षेपण असफल हो जाने पर प्रकल्प का नेता होने के नाते असफलता का सारा दायित्व उन्होंने अपने ऊपर लिया और अगले प्रक्षेपण के समय असफलता की सारी संभावनाओं को दूर करने के विकल्प तैयार रखे। जाहिर है, दूसरा प्रक्षेपण सफल होना ही था।

अपने प्रकल्पों से अन्तरंग प्यार

डा. अब्दुल कलाम अपने हर प्रकल्प के हर चरण में खुद भाग लेते हैं। इस कारण कई बार उनको खतरों का भी सामना करना पड़ा पर अपनी गहन सक्रियता से उन्होंने समर्पित तकनीशियनों की एक टीम खड़ी कर दी।

1979 में SLV-3 की परीक्षण उड़ान के दौरान एक वाल्व लीक कर जाने के कारण लाल धुमित शोरे का अम्ल डा. कलाम और उनके छः सहयोगियों के ऊपर गिर गया। सब लोगों को तुरन्त त्रिवेन्द्रम मेडिकल कॉलेज लाया गया। पर वहां छः बिस्तर खाली नहीं थे। डा. कलाम ने आग्रह किया कि उनके साथियों का इलाज पहले किया जाय।

रोहिणी रॉकेट पर कार्य करते समय डॉ. कलाम और उनके साथी सुधाकर राव दूर नियंत्रण प्रणाली द्वारा सोडियम और थर्माइट मिश्रण तैयार कर रहे थे। छटे आपरेशन के बाद यह देखने के लिए कि मिश्रण ठीक से भर गया है या नहीं, वे पे–लोड कक्ष में गये। थुम्मा में उन दिनों बड़ी गर्मी और उमस थी। सुधाकर राव के चेहरे पर आई पसीने के एक बूंद मिश्रण में गिर गई। तुरन्त एक बड़ा विस्फोट हुआ और आग लग गई। श्री राव ने तुरन्त बुद्धि से काम लिया और अपने हाथ से शीशा तोड़कर पहले डॉ. कलाम को बाहर धकेला और फिर खुद बाहर आ गये। मौत को जिन्दगी में बदलने वाली यह टीम–भावना उनको अपने सहयोगियों से और गहरे से जोड़ती है।

विनम्रता की मूर्ति

देश की स्वतंत्रता, विकास और आत्मनिर्भरता के लिए डॉ. कलाम के योगदान को अनेकों सम्मान देकर मान्य किया गया। 1981 में पद्म भूषण, 1990 में पद्म विभूषण और जाधवपुर विश्वविद्यालय द्वारा D.Sc., 1991 में I.I.T. मुम्बई द्वारा D.Sc. की की मानद उपाधि और 1997 में **भारत रत्न** द्वारा सम्मानित किया गया। सम्मान सभाओं में अपनी उपलब्धियों का श्रेय हमेशा उन्होंने अपने सहयोगियों को दिया। डा. विक्रम साराभाई, डा. सतीश धवन और डा. ब्रह्म प्रकाश को उन्होंने हमेशा अपने मार्ग दर्शकों के रूप में याद किया।

सीखने की अभी भी उनको बच्चों जैसी ललक है। किसी भी नये यंत्र की बनावट और कार्य विधि जानने के लिए वे उसे खेलने–तोड़ने के लिए बेचैन रहते हैं और किसी प्रक्रिया को समझने के लिए सीधे उस पर कार्य करने वाले मिस्त्री से बात करने में संकोच नहीं करते।

SLV-3 के सफल परीक्षण के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरागांधी ने मिलने के लिए दिल्ली बुलाया तो उनको बड़ा संकोच हो रहा था कि उनकी ढीली–ढाली वेषभूषा और स्लिपर्स क्या प्रोटोकोल के अनुरूप होंगे तब डा. धवन ने उनको प्रोत्साहित किया कि कलाम साहब आप अपनी सफलता की वेशभूषा से सुसज्जित हैं, हर व्यक्ति आपका सम्मान करने के लिए उत्सुक है।

अग्नि के उपयोग के बारे में उन्होंने कहा कि यह दुश्मनों पर कहर बरसा सकती है और दोस्तों पर फूल। भारत को रक्षा संसाधनों में आत्मनिर्भर बनाने के साथ ही वे धरती को संवारने और मानवता को विकसित करने के सपने देखते हैं। विज्ञान की शक्तियों का उपयोग मानवता की भलाई के लिए ही हो यह उनका सपना है।

दो सौ प्रतिशत भारतीय

डा. अब्दुल कलाम पूर्णतः शाकाहारी हैं। पान, तम्बाकू, सिगरेट, शराब आदि से कोसों दूर हैं। सामान्य जन की तरह रहते हैं, सबसे आत्मीयता से मिलते हैं, निकट संबंधियों की भी सिफारिश नहीं करते और एक या दो कमरों के मकान में व्यवस्था से रहते हैं।

वे एक संवेदनशील कवि हैं। वीणा बजाते हैं। विस्मिल्लाह खां की शहनाई सुनना पसंद करते हैं। व्यस्तता के बीच भी सुबह–शाम की नमाज पढ़ते हैं। गीता और कुरान दोनों पढ़े हैं और अपने भाषणों में उनके अंश उद्धृत करते हैं। वह ज्योतिष में विश्वास नहीं करते।

भारत को 2020 तक विकसित देश बनाने की अपनी योजना को उन्होंने Vision-2020 नामक पुस्तक में प्रस्तुत किया है, जिसको उन्होंने अपनी माता को समर्पित किया है।

कुशल योजनाकार

पोखरन–2 परमाणु परीक्षणों से पहले जिस प्रकार छद्म वेश में नाम बदलकर विस्फोटों की योजना का संचालन किया और फिर अमेरिकी जासूसी उपग्रहों की निगाह बचाकर विस्फोट कराये यह उनके कुशल योजनाकार होने का प्रमाण है।

भारतीय मिसाइल कार्यक्रम

डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के नेतृत्व में 1982 में इन्टीग्रेटेड गाईडेड मिसाइल डवलपमेंट प्रोग्राम की शुरूआत की गई। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित मिसाइल विकसित की गईं।

1. **पृथ्वी :** यह जमीन से जमीन पर प्रहार करने वाली कम दूरी तक मारक क्षमता वाली मिसाइल है। यह 500 किलोग्राम तक युद्धपरक सामग्री लेकर 250–300 किलोमीटर तक प्रहार कर सकती है।
2. **अग्नि :** यह जमीन से जमीन पर मध्यम व लम्बी दूरी तक प्रहार करने वाली मिसाइल है। अभी तक इस श्रेणी की अग्नि–1 व अग्नि–2 मिसाइलों का सफलतापूर्वक परीक्षण किया जा चुका है। अग्नि–2 मध्यम प्रकार की बैलस्टिक मिसाइल है, जिसको किसी चलायमान प्रक्षेपक से भी प्रक्षेपित किया जा सकता है। यह एक टन वजन की युद्धपरक सामग्री लेकर 2500 किलोमीटर तक मार कर सकती है। अब वैज्ञानिक 5000 किमी तक लक्ष्य को भेद सकने वाली अग्नि–3 मिसाइल विकसित करने में जुटे हैं।
3. **आकाश :** यह जमीन से हवा में प्रहार करने वाली मध्यम दूरी की मिसाइल है।
4. **त्रिशूल :** यह हवा से हवा में प्रहार करने वाल कम दूरी तक मारक क्षमता वाली मिसाइल है।
5. **नाग :** 6 किलोमीटर तक मार करने वाली तीसरी पीढ़ी की यह मिसाइल टेंक भेदी मिसाइल है। इसे हेलीकॉप्टर से रात्रि के समय भी प्रक्षेपित किया जा सकता है। इसका 20 जून 2002 को सफलतापूर्वक परीक्षण किया गया।

इनके अलावा दो और मिसाइलों-सागरिका और अस्त्र– पर भी कार्य हो रहा है। सागरिका एक ऐसी मिसाइल

होगी जिसे समुद्र में पनडुब्बी या जहाज से प्रक्षेपित किया जा सकता है। यह 300 किलोमीटर तक के लक्ष्य को भेद सकेगी। अस्त्र वायु से वायु में अत्यधिक दूरी तक मार करने वाली मिसाइल होगी। लेकिन इनको पूरा होने में अभी एक दशक का समय लग सकता है।

टैक्नोलोजी से हर समस्या का हल

डा. कलाम का मानना है कि तकनीकी विकास के साथ सामाजिक जीवन की अनेक समस्याओं का सामधान अपने आप होता जाएगा। उदाहरण के लिए अग्नि मिसाइलों के वायुमंडल में पुनः प्रवेश के समय घर्षण के प्रभावों से बचाने के लिए कार्बन–कार्बन नामक एक पदार्थ विकसित किया गया था। इसी से डा. कलाम और उनके साथियों ने फ्लोर रिएक्शन आर्थोसिस नामक कैलिपर्स बनाये। अपंग बच्चों के लिए सिर्फ 300 ग्राम वजन के ये मजबूत कैलिपर्स वरदान की तरह हैं। इन्हें पहनकर वे सरलता से घूम फिर सकते हैं।

लक्ष्य के अंतिम चरण की ओर

डा. कलाम की मान्यताऐं और आस्थाऐं अभी भी ज्यों की त्यों हैं। सरकारी दायित्व से मुक्त होने के बावजूद ISRO, TIFAC या परमाणु शक्ति संस्थान के किसी भी परीक्षण के दौरान वह स्वयं उपस्थित रहकर मार्गदर्शन देने के लिए तत्पर रहते हैं।

पिछले कुछ दिनों से वे विज्ञान को लोकप्रिय बनाने और बच्चों को टैक्नोलोजी सिखाने के प्रकल्पों पर कार्य कर रहे थे। पर, नियति ने शायद उनको और बड़े उद्देश्यों के लिए चुन लिया।

2002 से 2007 तक देश के ग्यारहवें राष्ट्रपति के रूप में उन्होंने सक्रिय रूप से देश का प्रत्येक क्षेत्र में कुशल मार्गदर्शन किया।

देश एक अवसर और देता तो बारहवें राष्ट्रपति के रूप में शायद वे देश को अधिक तेजी से विकास के पथ पर ले जाते और Vision-2020 निर्धारित समय–सीमा से पहले साकार रूप ले सकता। पर पद उनकी शक्ति नहीं है। उनकी शक्ति है सहजता, समर्पण और अथक कार्य। आज भी वे देश–विदेश में दौड़ रहे हैं ताकि उनका विजन 2020 साकार हो सके।

❐

विद्वान देखता है कि जो विद्या उसे आनन्द देती है, वह संसार को भी आनन्दप्रद होती है और इसलिए वह विद्या को और भी अधिक चाहता है।

–तिरुवल्लुर

यद्यपि सब जब का हि–चिन्तन सब को आवश्यक है।
पर प्रत्येक मनुज पर पहला देश जाति का हक़ है।।
पैदा कर जिस देश जाति ने तुमको पाला–पोसा।
किए हुए है वह निज हित का तुम से बड़ा भरोसा।।
उससे होना उऋण प्रथम है सत्कर्त्तव्य तुम्हारा।
फिर दे सकते हो वसुधा को शेष स्वजीवन सारा।।

रामनरेश त्रिपाठी (पथिक, पृष्ठ 34)

प्लास्टिक के जहर के कहर से कैसे निजात पायें

❐ रामनिवास शर्मा

प्रस्तुत लेख में प्लास्टिक की प्रकृति उससे होने वाली हानियाँ, प्लास्टिक अपशिष्ट के निष्पादन के उचित तरीके व खतरों से निजात पाने के तरीकों से जनसाधारण को जागरूक करने का प्रयास किया गया है। समस्या समाधान के पुनीत यज्ञ में आहूति हेतु आग्रह है।

विज्ञान ने मानव की आवश्यकताओं को पूरा करने में अतुलनीय योगदान दिया है। दूसरे विश्व युद्ध के समय ऐसी वस्तुओं की जरूरत महसूस की गई जो हल्की व मजबूत होने के साथ-साथ गरमी से प्रभावित न होती हों। कीड़े-मकोड़े व पानी का असर जिस पर न हो। तेजाब जैसे रसायन भी बेअसर हों। आज से लगभग 125–150 वर्ष पूर्व सेलूलस नाइट्रेट व कपूर से सेलुलाइड बनाया गया जो वर्तमान प्लास्टिक का जनक है। आवश्यकता होने पर नॉइलोन, सिलिकोन व टेफलान बनाये गये जो हल्के-फुल्के होने के साथ-साथ मजबूत भी थे। द्वितीय विश्व युद्ध तक प्लास्टिक का उपयोग सेना तक ही सीमित था। युद्ध समाप्ति पर सेना में इसकी मांग समाप्त हो गई। लेकिन तब तक यह रंग के योग से और भी खूबसूरती धारण कर चुकी थी। जनता के बीच उसने पैर जमाना शुरू कर दिया था। देखते ही देखते 50–60 सालों में ही पूरी दुनिया पर काबिज हो गई। 1906 में मजबूत प्लास्टिक 'बैकेलाइट' भी बना। भारत भी इससे अछूता न रहा। 1960 में हमारे देश में भी पॉलीथीन ने अपना पहला कदम रखा। आज विश्व में प्रतिदिन 150 मिलियन टन प्लास्टिक बनता है। लचीलापन, टिकाऊ व सस्ता होने के कारण इसने उपभोक्ताओं पर शिकंजा कस लिया है।

आज भारत में 14 लाख टन प्लास्टिक व पॉलीथीन की खपत है। यह हमारे जीवन की अभिन्न अंग बन गये हैं। चाहे दूध हो या कोल्ड ड्रिंक्स सभी प्लास्टिक पैकिंग में आने लगे हैं। आज हर व्यक्ति महसूस करने लगा है कि प्लास्टिक बिन जीवन कैसा?

सन् 2003 में किये गये सर्वे के अनुसार हमारे देश में प्रतिदिन 10,000 मैट्रिक टन कचरे का लगभग 5 प्रतिशत प्लास्टिक है जिसका 10 प्रतिशत केवल पॉलीथीन बैग्स हैं।

'यूज एण्ड थ्रो' (इस्तेमाल करो और फेंक दो) संस्कृति के कारण प्लास्टिक के ढेर हर जगह दिखाई देने लगे हैं। प्लास्टिक के अत्यधिक उपयोग से जीवन नारकीय हो चला है। बिना सोचे समझे प्लास्टिक जैसे साधन पैदा करके पर्यावरण को विनाश के कगार पर खड़ा कर दिया है। पिछले 5–7 सालों में इसने और भी तेज गति से पैर पसारे हैं। पॉलीथीन अपशिष्ट ने स्वच्छता व मानव स्वास्थ्य के लिए भयावह स्थिति पैदा कर दी है। ठोस व तरल अपशिष्ट के सही निपटान के अभाव में अनेक बीमारियाँ फैल रही हैं। प्लास्टिक अपने जन्म (उत्पादन) से लेकर डिस्पोजल तक पर्यावरण को खतरा है। इसका निर्माण पेट्रोलियम पदार्थों से होता है जो उत्पादन के समय ही जल प्रदूषण को जन्म देते हैं। 50 हजार पॉलीथीन बैग्स बनाने से 17 किलो सल्फर डाइआक्साइड गैस वायुमण्डल में समाहित हो जाती है, जो पेड़–पौधों व वायुमण्डल को नुकसान पहुंचाती है।

❐ रामनिवास शर्मा, प्रधानाचार्य, रा.उ.मा.वि. दिसनाऊ, वाया बलारा, सीकर, राजस्थान मो. 9785597511

उत्पादन के बाद तो यह पर्यावरण ही नहीं, मानव को भी जानलेवा बीमारियों की सौगात भी देता है।

रसोईघर में काम आने वाले रंगीन डिब्बों में मसाले (हल्दी, मिर्च व नमक) चीनी, दालें इत्यादि रखे जाते हैं। ये प्लास्टिक में मौजूद रसायनों को अपने में मिलाकर अग्नाशय के रोग व केंसर उपहार में देते हैं। सुविधा के चक्कर में दूध, दही व चाय इत्यादि पॉलीथीन में लाकर हम गठिया, चर्म रोग व हृदय संबंधी रोगों को निमन्त्रण दे रहे हैं। प्लास्टिक की बाल्टी में गरम पानी भरकर स्नान करने से एक्जीमा व खाज-खुजली जैसे रोगों के होने की संभावना बनी रहती है।

इतना ही नहीं 'पोलिस्टिरीन रेजिन' (Polysterene Resin) का हानिकारक तत्व पानी में मिलकर वक्ष, पेडू व प्रजनन अंगों में रोग पैदा करता है जिसमें प्रमेह, स्तनजन्य रोग प्रमुख हैं। रसोई में पुनःचक्रित प्लास्टिक के संसर्ग में आने के कारण महिलाएँ उच्च रक्तचाप की शिकार बनती हैं। प्लास्टिक खिलौनों में मिले खतरनाक पदार्थ आर्सेनिक व केडमियम बच्चों को सदा–सदा के लिए खामोश कर देते हैं। इतना ही नहीं खिलौनों को लचीला बनाने में प्रयुक्त 'थैलियम' (Thallium) जहर पेट में पहुंचकर उन्हें विमंदित बना देता है।

यह भी माना जाता है कि मां के गर्भ में पल रहे शिशु भी प्लास्टिक के प्रभाव से नपुंसक तक हो सकते हैं। 'यूनिवर्सिटी ऑफ मिशन कोलम्बिया रिप्रोडेक्टिव बॉयलाजी' के प्रो. फ्रोड–वोम के मुताबिक प्लास्टिक के उपयोग के कारण नर पशुओं में नर होने के तकरीबन लक्षण ही बदल जाते हैं। संभव है कि भविष्य में पुरुषों में बहुत से लक्षण महिलाओं जैसे दिखाई देने लगें।

घर का कचरा, बची हुई सब्जियां व अन्य खाद्य सामग्री हम प्लास्टिक की थैलियों में फैंक देते हैं। खुले में घूमते हुए पशु खाद्य सामग्री के साथ प्लास्टिक की थैलियां भी निगल जाते हैं। यह उनके पेट में जमा हो जाती हैं। इनको पचाने की दवा बनाने में कामयाबी अभी तक हासिल नहीं हो सकी है। इस कारण प्रतिवर्ष 35 लाख पशुधन काल का ग्रास बनता है जिससे हमारी अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

प्लास्टिक थैलियां नष्ट न होने के कारण सफाई व्यवस्था में भी व्यवधान पैदा करती हैं। 10 प्रतिशत सीवर लाइनों में रुकावट होने का यही कारण है।

1998 में मुम्बई शहर में सीवर नेटवर्क के जाम हो जाने के कारण कृत्रिम बाढ़ तक आ गई थी। ये पॉलीथीन वर्षा ऋतु में जमीन में धंस जाती हैं। धरती की उर्वरा शक्ति कमजोर हो जाती है। सिन्थेटिक कूड़े की मात्रा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को प्रभावित करती है। इस समस्या से निजात (छुटकारा) पाने के लिए ऐसे कूड़े को जलाना भी उपयुक्त समाधान नहीं है। यह पॉलीथीन के पूर्ण रूप से न जलने तथा विषाक्त गैसें उत्पन्न करने के कारण है। पी.वी.सी. जलने पर कार्बन डाइआक्साइड व फ्यूरान्स (Furons) इत्यादि पैदा होते हैं जिससे बुद्धिहीनता, बांझपन व कैंसर होने की संभावना होती है।

पर्यावरण विशेषज्ञ बिट्टू सहगल का मानना है कि "पिछले 8–10 वर्षों से पॉलीथीन समुद्र में आक्सीजन को रोककर मछलियों व समुद्री जानवरों को मौत के घाट उतार रही है।" गांवों व शहरों में जहाँ जहाँ कूड़े–करकट के ढ़ेर लगे होते हैं वहां गरमी के मौसम में इसकी विषाक्तता और भी बढ़ जाती है। पोलिस्टिरीन जलाने से क्लोरो फ्लोरो कार्बन निकलती है जो जीवनदायी ओजोन मण्डल को नष्ट कर धरती पर प्रलय कर सकती है। प्लास्टिक हमारी 15 से 25 पीढ़ियों तक पूर्ण रूप से नष्ट नहीं होती। न तो प्लास्टिक को जलाया जाना उचित है और न ही उसे जमीन में गाड़ा जाना। इससे जल, थल व नभ तीनों ही सुरक्षित नहीं हैं। प्लास्टिक मानो हिरण्यकश्यप की तरह न सर्दी में, न गरमी में, न जल में, न थल में मरने का वरदान प्राप्त कर चुकी है, आज सारा संसार प्लास्टिकमय हो गया

है। बिना प्लास्टिक जीवन कैसा? फिर भी समस्या के समाधान के कुछ पहलुओं पर विचार विमर्श की आवश्यकता समीचीन है।

वास्तव में प्लास्टिक उत्पादन अधिकांशतः लघु उद्योगों में होता है। जहाँ गुणवत्ता से समझौता किया जाता है। उत्पादन में निर्धारित मापदण्डों का पालन नहीं किया जाता है। प्लास्टिक अपशिष्ट का मोटाई के आधार पर, खाद्य–अखाद्य के आधार पर तथा पुनर्चक्रणशील तथा अपुनंचक्रणशील के आधार पर पृथकीकरण करना चाहिए। सामान्यतः 3–4 चक्रणों के बाद प्लास्टिक सर्वथा अनुपयुक्त हो जाता है। हमें पर्यावरण के अनुकूल प्लास्टिक प्रौद्योगिकी विकसित करने की आवश्यकता है।

आज करीब 10 लाख लोग कचरा बीनने में लगे हैं। लगभग 3 लाख टन प्लास्टिक का पुनर्चक्रण हो रहा है। ऐसी परियोजनाएं तैयार की जानी चाहिए जिनमें प्लास्टिक को गरम करने की आवश्यकता ही न पड़े। नागपुर में अपशिष्ट प्लास्टिक के निष्पादन के लिए पर्यावरण अनुकूल उत्प्रेरक योजक प्रक्रिया का आविष्कार किया गया है जिसमें हाइड्रोकार्बन व गैस प्राप्त होती है। ईंधन रूप में परिवर्तित करने की प्रक्रिया में विशेष अभिकल्पित रिएक्टर में आक्सीजन की अनुपस्थिति में 3500 डिग्री सेल्सियस पर रेण्डम आधार पर 'डिपोलीमराइजेशन' (Depolymerisation) किया जाता है। इसमें ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। 1 लीटर हाइड्रोकार्बन ईंधन से 6–7 यूनिट बिजली का उत्पादन संभव है।

प्लास्टिक के ज़हर से निजात पाने के लिए उपभोक्ता, उत्पादक व सरकार तीनों को ही जागरूक होना होगा। वैयक्तिक जीवन में जागृति होना समष्टि जागृति का पहला कदम होगा। निज से सर्वजन की ओर जीना है, प्लास्टिक संबंधित उत्तरदायित्वों के साथ।

रस्सी, थैले, तकिये व शो–पीस प्लास्टिक अपशिष्ट से बनाये जा सकते हैं। प्लास्टिक अपशिष्ट को अलकतरा के साथ मिलाकर सड़कों का निर्माण व कमरों की छतें बनाई जा सकती हैं। इसे पेट्रोल में बदलने का अभिनव प्रयोग भी किया जा रहा है।

जल प्रदूषित, नभ प्रदूषित
धरती बन रही बांझ।
प्लास्टिक के साथ जीना सीखो
उत्तरदायित्वों के साथ।

तो आइये, हम सब एकजुट होकर प्लास्टिक अपशिष्टों के उचित निष्पादन के लिए क्रान्ति का सूत्रपात करें। जीवन में छोटी–छोटी बातों पर ध्यान दें तो पूर्णता को प्राप्त कर सकेंगे जो अपने आप में छोटी बात नहीं होगी। समस्या के समाधान के कुछ इस प्रकार के हल सुझाये जा सकते हैं।

1. यथा संभव जूट या कपड़े के उपयोग की आदत डालें।
2. प्लास्टिक अपशिष्ट यथा निर्धारित स्थान पर कचरे–पात्र में ही डालें।
3. सस्ती व घटिया गुणवत्ता वाली पॉलीथीन की थैलियों में खाद्य पदार्थ न डालें।
4. घर से निकाले हुए कचरे में से प्लास्टिक अलग कर लें।
5. प्रत्येक परिवार प्रतिदिन एक या दो पॉलीथीन की थैली कम करने का संकल्प करे।
6. होटल से चाय, सब्जी या अन्य खाद्य पदार्थ पॉलीथीन की थैली में लाने की आदत छोडें।
7. पॉलीथीन की रंगीन थैलियों का उपयोग न करें।
8. पॉलीथीन से बढ़ते हुए खतरों से जनसाधारण को अवगत/जागरूक कराया जाए।
9. एक ही प्लास्टिक बैग को बार–बार प्रयोग में लायें।
10. बच्चों के खिलौनों के प्लास्टिक की गुणवत्ता पर ध्यान दें।
11. 20 माइक्रोन से कम मोटाई की पॉलीथीन की थैलियों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया जाये।
12. 'फोटोडिग्रेडेबल' विधि से पॉलीथीन का निर्माण किया जाए।
13. सरकार द्वारा गुणवत्तायुक्त प्लास्टिक एवं उसके विकल्प पर करों में छूट दी जाए।
14. पॉलीथीन उत्पादक, जो निर्धारित मापदण्डों का पालन नहीं करते, उन्हें कड़ी से कड़ी सजा का प्रावधान किया जाए।
15. प्लास्टिक अपशिष्ट को अलकतरा के साथ मिलाकर सड़कों तथा भवनों की छतों के निर्माण में काम में लाया जाये।
16. 'स्वास्थ्य' को मानव का मौलिक अधिकार माना जाए।

पौधों के द्वारा पर्यावरण शुद्धिकरण (Phytoremediation)

❐ मनीष मोहन गोरे

पेड़–पौधे प्रकृति और जीवों का अनेक प्रकार से भला करते हैं। प्रकृति में इन्हीं पेड़–पौधों से हमें साँस लेने के लिए ऑक्सीजन गैस मिलती है। पूरी दुनिया के जीवधारियों के भरण–पोषण के लिए ये पेड़–पौधे विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुएं जैसे खाद्यान्न, फल, सब्जियां, रेशे और औषधियां आदि प्रदान करते हैं।

आज आधुनिकता के चलते अनेक उद्योग–धन्धे लगाये जा रहे हैं और इनसे निकले अपशिष्ट पदार्थ जैसे औद्योगिक कचरा आदि आस–पास के पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे हैं। यह भी देखा गया है कि कुछ पौधे प्रदूषण और मानवजनित अनेक पर्यावरणीय समस्याओं का निदान करने में सहयोग करते हैं और प्राकृतिक संतुलन कायम करते हैं। प्रकृति में चल रही इस प्रक्रिया को फाइटोरेमेडीएशन (Phytoremediation) कहते हैं। फाइटोरेमेडीएशन ग्रीक और लैटिन भाषा से मिलकर बना शब्द है (ग्रीक शब्द फाइटो (Phyto)–पादप और लैटिन शब्द रेमिडियम (Remedium) संतुलन बनाए रखना या उपचार करना)। फाइटोरेमेडिएशन की प्रक्रिया के अंतर्गत पौधे प्राकृतिक संतुलन बनाते हैं और पर्यावरणीय समस्याओं का निदान करते हैं।

फाइटोरेमेडीएशन की प्राकृतिक क्षमता सरसों, एल्पिन और पिग्विड आदि अनेक पादप प्रजातियों में पाई जाती है। ये पौधे फाइटोरेमेडीएशन प्रक्रिया के अन्तर्गत मिट्टी, जल और वायु में मौजूद धातु, कीटनाशक, विस्फोटक, कच्चा तेल या इसके व्युत्पन्न पदार्थों से होने वाले संदूषण का निदान करते हैं और एक अवधि के बाद इन पदार्थों से उस स्थान को मुक्त करते हैं।

प्रकृति में यह प्रक्रिया प्राकृतिक रुप से धीमी गति के साथ चलती रहती है, परन्तु अब उद्योगों के निकटस्थ स्थलों पर विषाक्त रसायनों से वहां के पर्यावरण को मुक्त करने के लिए इस प्रक्रिया के उपयोग ने व्यावसायिक स्वरुप ग्रहण कर लिया है। लगातार प्रदूषित हो रहे या अत्यधिक प्रदूषित भूमि या जल–तंत्र को प्रदूषक तत्वों से मुक्त करने में भी फाइटोरेमेडीएशन का सहारा लिया जाने लगा है। धातु या कोयला उत्खनन स्थलों के आस–पास की भूमि से धातु कणों को दूर करने में फाइटोरेमेडीएशन रामबाण का काम करता है।

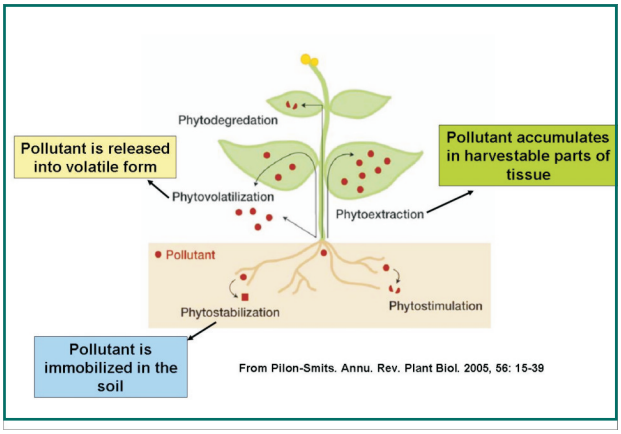

फाइटोरेमेडीएशन प्रक्रिया का चित्रीय निरूपण

फाइटोरेमेडीएशन एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसमें पर्यावरण को कोई क्षति नहीं पहुँचती। प्रकृति में चलने वाली इस प्रक्रिया का मनुष्य द्वारा अपने हित में पिछले 20 वर्षों से उपयोग किया जा रहा है। इसकी लोकप्रियता दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सीसा, यूरेनियम और आर्सेनिक से संदूषित भूस्थलों का उपचार इस विधि द्वारा सम्भव हो सका है।

फाइटोरेमेडीएशन की केवल एक खामी यह है कि इस प्रक्रिया में बहुत अधिक समय लगता है क्योंकि इसमें

❐ मनीष मोहन गोरे, विज्ञान प्रसार, ए–50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर–62, नोएडा–201309 (उ.प्र.)

प्रयुक्त पौधे की पहले वृद्धि होती है और इसके बाद वह भूमि/जल/वायु में मौजूद विषाक्त तत्वों को अपने भीतर अवशोषित करने की क्षमता विकसित करता है और अंत में उस स्थान की विषाक्तता/प्रदूषण धीरे–धीरे खत्म करता है।

इस प्रक्रिया की सबसे रोचक और महत्वूपर्ण विशेषता यह है कि इसमें आस–पास के पर्यावरण के स्वरुप में किसी प्रकार का कोई बदलाव नहीं होता तथा वहां पाये जाने वाले सभी जीव (स्थलीय, जलीय या वायवीय) सुरक्षित बने रहते हैं। हाँ, संदूषणकारी धातुओं के अवशोषण के बाद उन पौधों द्वारा धात्विक तत्व खाद्य–श्रृंखला की अन्य कड़ियों में स्थानांतरित कर दिया जाता है और इसमें खाद्य–श्रृंखला और इसकी सदस्य कड़ियाँ किस प्रकार प्रभावित होती हैं, इस विषय पर वैज्ञानिक शोध चल रहे हैं। निकट भविष्य में इस दिशा में नई जानकारी सामने आएंगी।

फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया के अंतर्गत निम्न चरण शामिल किये जाते हैं:

1. पादप निष्कर्षण (Phytoextraction)
2. पादप मूल निस्यंदन (Rhizofiltration)
3. पादप स्थिरीकरण (Phytostabilization)
4. पादप रुपांतरण (Phytotransformation)
5. पादप प्रेरण (Phytostimulation)
6. पादप वाष्पीकरण (Phytovolatilization)

पादप निष्कर्षण (प्रकृति में मौजूद गंदगी का भी पौधे सफाया करते हैं)

पर्यावरणीय पारितंत्रों में मौजूद अनेक समस्याओं के उपचार के लिए पौधों के उपयोग द्वारा मनुष्य विभिन्न प्रकार के तरीके अपनाता है। इन तरीकों के विषय में हम यहाँ संक्षेप में चर्चा करेंगे। मिट्टी, तलछट या फसलों पर छोड़े गए जल में संदूषित पदार्थों/तत्वों को दूर करने के लिए कुछ पौधों जैसे शैवाल का प्रयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया को पादप निष्कर्षण (Phytoextraction) कहते हैं। पिछले करीब दो दशकों से इस विधि का प्रचुर इस्तेमाल पूरी दुनिया में होने लगा है और यह काफी लोकप्रिय भी हो चला है। इस विधि में कार्बनिक पदार्थों की अपेक्षा भारी तत्वों का निष्कर्षण अत्यंत सुगमता से किया जाता है। इसमें संक्रामक तत्वों के निष्कर्षण में प्रयुक्त होने वाले पौधे संक्रामक तत्वों को अपने अन्दर बहुत सूक्ष्मता के साथ समाहित करने में समर्थ होते हैं। प्रायः ये पौधे संक्रामक तत्वों को अपनी जड़ों के द्वारा अवशोषित करके या फिर जड़ों की कोशिकाओं में संचित करके रखते हैं या फिर ऊपर तने में पत्तियों में स्थानांतरित कर देते हैं। ये उपचारक पौधे जीवनपर्यन्त या स्वयं के नष्ट होने तक आस–पास मौजूद संक्रामक तत्वों के मृदा या जल से निष्कर्षण का काम करते रहते हैं। अधिकांशतः पादप निष्कर्षण से जुड़ी हुई पादप–प्रजातियों की पूरी खेती उस मिट्टी में की जाती है जो भारी तत्वों के संक्रमण से प्रभावित होता है और कई चक्रों के बाद यह देखा जाता है कि उस मिट्टी से वे तत्व इन पौधों द्वारा पूरी तरह अवशोषित कर लिए गए हैं। उस स्वच्छ तथा संक्रमणरहित मिट्टी में नियमित फसल की बुआई की जा सकती है।

उपरोक्त विधि में सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि यह एक पर्यावरणमित्र विधि होने के कारण इसमें मिट्टी की गुणवत्ता एवं संरचना पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता, जबकि भारी तत्वों से संक्रमित मिट्टी के उपचार में प्रयोग की जाने वाली परम्परागत विधियों के उपयोग के फलस्वरुप मिट्टी की गुणवत्ता पर बुरा प्रभाव पड़ने से उस स्थान की उत्पादकता कम हो जाती है। दूसरा लाभ यह होता है कि इस विधि में अन्य विधियों की तुलना में लागत बहुत कम आती है। इस विधि में हानि सिर्फ यही है कि इस प्रक्रिया में अपेक्षाकृत समय बहुत अधिक लगता है। वैज्ञानिकों ने कुछ ऐसे रसायनों को प्रयोगशाला में विकसित कर लिया है, जिन्हें मिट्टी में डालने से भारी तत्वों की घुलनशीलता बढ़ जाती है और इसके परिणामस्वरूप पादप निष्कर्षण में संलग्न पौधों को उनके नैसर्गिक काम में आसानी हो जाती है।

सूरजमुखी का पौधा अर्सेनिक को मिट्टी से निष्कर्षित करता है

सूरजमुखी का पौधा अर्सेनिक, बेंत (Willow) एवं एल्पिन के पौधे कैडमियम, सरसों सन तथा पहाड़ी पीपल (च्वच. संत) सीसा को मिट्टी से निष्कर्षण करने में सहायक होते हैं।

पादप मूल निस्यंदन (पौधे अपनी जड़ों से संक्रामक तत्वों को अवशोषित करते हैं)

यह पादप निष्कर्षण से मिलती–जुलती अन्य एक प्रक्रिया होती है जिसे पादप मूल निस्यंदन (Rhizofiltration) कहते हैं। इन दोनों के बीच मूलभूत अंतर यह है कि पादप निष्कर्षण द्वारा मिट्टी में मौजूद प्रदूषकों/संक्रामकों का उपचार किया जाता है, जबकि पादप मूल निस्यंदन का इस्तेमाल जलीय पारितंत्र में मौजूद प्रदूषकों/संक्रामकों का उपचार करने में करते हैं।

उक्त दोनों ही विधियाँ एक ही मूल सिद्धांत पर काम करती हैं। इसमें पौधे जल या मिट्टी में उपस्थित हानिकारण पदार्थों को अपनी जड़ों द्वारा अवशोषित करके जड़ या ऊपर तने या पत्तियों में स्थानांतरित करके उन्हें संचित करते रहते हैं। ये पौधे इन पदार्थों को तब तक अवशोषित करते रहते हैं जब तक कि इन फसलों की कटाई नहीं हो जाती। विषाक्त या संदूषित हो गई मिट्टी या जलतंत्र का उपचार जब कृत्रिम रुप से इन विधियों द्वारा करना होता है तो उपचारक पौधों को उस पर्यावरण में तब तक उगने देते हैं जब तक कि वहां मौजूद अधिकांश हानिकारक पदार्थ उन पौधों द्वारा अवशोषित न कर लिए जायें।

बेंत, पहाड़ी पीपल और सूरजमुखी जैसे पौधे पादप निष्कर्षण और पादप मूल निस्यंदन में उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इनकी जड़ें मिट्टी के कणों के अति सूक्ष्म छिद्रों में प्रवेश करके प्रतिदिन के हिसाब से 100 लीटर पानी का चक्रण करने में सक्षम होती हैं। इन वृक्षों की जड़ें पंप के समान कार्य करती हैं और मिट्टी तथा पानी में निहित अपशिष्ट/वर्ज्य तत्वों को अवशोषित कर लेती हैं।

पादप मूल निस्यंदन का प्रयोग इन–सीटू (In-situ, प्रयोगशाला या कृत्रिम परिवेश के भीतर) विधि से सरलता के साथ किया जा सकता है। संदूषित जल–तंत्र में ऐसे पौधों को सीधे उगाकर इस विधि का इस्तेमाल किया जा सकता है। यह अपेक्षाकृत सस्ती विधि है।

अत्यधिक गहराई वाली मिट्टी में मौजूद प्रदूषकों को बाहर करने में यह विधि कारगर नहीं होती है। इसके अतिरिक्त ऐसे स्थल जहाँ विभिन्न प्रकार के संक्रामक पदार्थ उपलब्ध होते हैं, उसके उपचार में भी यह विधि अधिक लाभदायक नहीं होती है।

पादप मूल निस्यंदन विधि में पौद्यों की मदद से संदूषित जल तंत्र को शुद्ध करते है

नैसर्गिक रुप से पौधे की अनेक प्रजातियाँ भारी तत्वों और पोषक तत्वों की अतिरिक्त मात्रा, मृदा या जल से अवशोषित कर लेती हैं। इसके अतिरिक्त सूखे से बचाव, अन्य पौधों का हस्तक्षेप और रोगाणु से रक्षा आदि जैसे अनेक जिम्मेदार कारक होते हैं, परन्तु इस कारण उस जल या मृदा–तंत्र में मौजूद भारी तत्वों तथा संक्रामक पदार्थों का भी सफाया हो जाता है।

पादप स्थिरीकरण (पर्यावरण में पदार्थों की गतिशीलता को कम करती है)

पौधों एवं वृक्षों की उपस्थिति में वायु अपरदन की संम्भावनाएं कम हो जाती हैं । पौधों की जड़ें मिट्टी के कणों को अपने में बांधकर इन्हें बहने से रोकती हैं तथा मिट्टी में घुले हुए प्रदूषकों को पौधे अपनी जड़ों में जकड़े रखते हैं। पौधों के द्वारा संपन्न इस प्रकार की क्रियाओं को समेकित रुप से पादप स्थिरीकरण (Phytostabilization) कहते हैं। पादप निष्कर्षण पादप स्थिरीकरण से भिन्न प्रक्रिया होती है। पादप स्थिरीकरण में संलग्न पौधे प्रदूषक या संक्रामक तत्वों को अपनी जड़ों के चारों ओर एकत्र करके मिट्टी में नीचे भेज देते हैं जबकि पादप निष्कर्षण में पौधे अपनी जड़ों की कोशिकाओं में उन संक्रामक तत्वों को अवशोषित कर लेते हैं।

पादप स्थिरीकरण में पौधे की जड़ें मिट्टी की कणों को बांधकर उन्हें बहने से रोकती हैं और उनमें व्याप्त संदूषण को भी समेट लेती हैं।

पादप रुपांतरण (पौधे औद्योगिक रसायन एवं अन्य प्रदूषकों के असर को मंद करने में भी मददगार हैं)

मृदा या जल में कीटनाशक, विस्फोटकों, पदार्थों, औद्योगिक रसायन जैसे कार्बनिक प्रदूषकों को कुछ पौधे अपने अंदर होने वाली उपापचयी क्रियाओं द्वारा कम हानिप्रद बना देते हैं। यहाँ तक कि मृदा में पाए जाने वाले अनेक सूक्ष्मजीव (जीवाणु, कवक आदि), जो पौधों की जड़ों में सहजीवी के रुप में रहते हैं, वे इन प्रदूषकों को अपचयित करके उस मिट्टी को विशेष उपयोगी बना देते हैं। पौधों या सूक्ष्मजीवों द्वारा इस प्रकार प्रदूषकों को अपघटित करने की नैसर्गिक प्रक्रिया को पादप रुपांतरण (Phytotransformation) कहते हैं। इस प्रक्रिया को हरा यकृत मॉडल (Green Liver Model) नाम दिया जाता है। जिस प्रकार मानव शरीर में यकृत अनेक हानिकारक पदार्थों को अपघटित करके उन्हें शरीर से बाहर निकालने में मदद करता है उसी प्रकार पादप रुपांतरण क्रिया में भी पौधे मिट्टी में स्थित प्रदूषकों को दूर हटाते हैं।

पादप प्रेरण (सूक्ष्म जीवों की प्रक्रिया द्वारा मृदा के उपचार में मदद करते हैं)

पौधों की जड़ों से स्रवित होने वाले कुछ प्रेरक तत्व जब मृदा में मौजूद कार्बनिक या संक्रामक तत्वों को खंडित करते हैं तो इस प्रक्रिया को पादप प्ररेण (Phytostimulation) कहते हैं। जड़ों से स्रवित होने वाले प्रेरक तत्वों में शर्करा, कार्बोहाइड्रेट, अमीनो अम्ल और एंजाइम प्रमुख हैं। माइकोराइजा कवक भी पादप प्रेरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस प्राकृतिक प्रक्रिया में पौधों की जड़ों के आस–पास सूक्ष्मजीवीय गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं। पादप प्रेरण प्रक्रिया को जब कृत्रिम रुप से किसी स्थान के मृदा उपचार में प्रयोग करते हैं तो इस बात का ध्यान रखते हैं कि उस मृदा में प्रदूषक तत्वों की विषाक्तता का स्तर निम्न हो। जिस मिट्टी में यह स्तर उच्च होता है, वहां यह विधि अधिक कारगर नहीं होती।

पादप वाष्पीकरण (जल या मृदा से पदार्थों को निकालकर वायु में छोड़ना)

पौधे अपनी जड़ों द्वारा अवशोषित जल का अधिकांश हिस्सा पत्तियों और तने में मौजूद अति सूक्ष्म छिद्रों (रंध्र) के रास्ते वायुमण्डल में पुनः विसर्जित कर देते हैं। इस प्रक्रिया को वाष्पोत्सर्जन (Transpiration) कहते

हैं। मिट्टी में पाए जाने वाले अनेक हानिप्रद तत्व जल में घुलकर जड़ों में पहुंचते हैं और वाष्पोत्सर्जन प्रक्रिया के माध्यम से वाष्पीकृत हो जाते हैं। वाष्पीकरण के द्वारा जब पौधे मिट्टी को प्रदूषकों से मुक्त करते हैं तो इस प्रक्रिया को पादप वाष्पीकरण (Phytovolatilization) कहते हैं। इसमें अधिकतर मिट्टी में मौजूद संक्रामक कार्बनिक यौगिकों को पौधे वाष्पीकृत करते हैं।

एक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला है कि पहाड़ी पीपल का वृक्ष मिट्टी में मौजूद क्लोरोएथीलीन की 90 प्रतिशत मात्रा को अपनी जड़ों द्वारा अवशोषित करके वाष्पीकृत करने में सक्षम होता है।

सन्दर्भ

1– फंडामेंटल्स ऑफ इकोलाजी, ई. पी. ऊडम, 2001

2– प्लांट ब्रीडिंग, आर. पी. सिंह, 1990

3– आधुनिक वनस्पति विज्ञान, एम. पी. कौशिक, 1996

❐

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान को अपनी पसंद बनाने के पाँच कारण

1. सीखने की स्वतंत्रता

'सभी तक सबके लिए' के उद्देश्य के साथ राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान सीखने की स्वतंत्रता के सिद्धांत का पालन करता है, अर्थात क्या सीखना है, कब सीखना है, कैसे सीखना है और कब परीक्षा में बैठना है, आदि का निर्णय आप करेंगे। समय, स्थान और सीखने की गति के लिए कोई बंधन नहीं है।

2. सुविधा

एनआईओएस निम्नलिखित मामलों में सुविधा देता है:

- **विषयों का चुनाव:** उत्तीर्ण होने के मानदंड को ध्यान में रखते हुए दी गई सूची के अनुसार आप अपनी पसंद के विषयों का चुनाव कर सकते हैं।
- **प्रवेश:** आप माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तरों पर विभिन्न प्रकारों के अंतर्गत ऑन–लाइन प्रवेश ले सकते हैं अथवा अध्ययन केन्द्रों पर प्रवेश ले सकते हैं।
- **परीक्षा:** सार्वजनिक परीक्षाएँ वर्ष में दो बार आयोजित होती हैं। पाँच वर्षों में नौ बार परीक्षा देने के अवसर दिए जाते हैं। इस अवधि के दौरान जब भी आप अच्छी तरह तैयार हों तभी परीक्षा दें और क्रेडिट को एकत्रित करने की सुविधा भी प्राप्त करें।
- **जब चाहो तब परीक्षा:** जब भी आप परीक्षा के लिए तैयार हों आप नोएडा स्थित मुख्यालय में माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर एनआईओएस की जब चाहो तब परीक्षा (ओड्स) में भी बैठ सकते हैं।

3. प्रासंगिकता

एनआईओएस पाठ्यक्रम और कार्यक्रम, कार्य आधारित, दिन–प्रतिदिन के जीवन में अत्यंत उपयोगी है और भावी पढ़ाई के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं। एनआईओएस के सफल विद्यार्थी आई.टी.आई. दिल्ली विश्वविद्यालय, जामिया हमदर्द, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, पंजाब विश्वविद्यालय, इलाहाबाद विश्वविद्यालय और बहुत से अन्य प्रसिद्ध और व्यावसायिक संस्थाओं में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

4. क्रेडिट स्थानांतरण

एनआईओएस पूर्व ज्ञान को महत्त्व देता है और इसी के अंतर्गत कुछ परीक्षा बोर्डों/राज्य मुक्त विद्यालयों से उत्तीर्ण किए गए अधिकतम दो विषयों के क्रेडिट स्थानांतरण की अनुमति देता है।

5. मान्यताप्राप्त गुणात्मक शिक्षा

एनआईओएस गुणात्मक शिक्षा देने के लिए प्रयत्न कर रहा है। भारत सरकार ने इस संस्थान का माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सार्वजनिक परीक्षाएँ आयोजित करने और प्रमाणपत्र देने का अधिकार प्रदान किया है जो कि अन्य बोर्डों के प्रमाणपत्रों के समान है। सीबीएसई और सीआईएससीई बोर्डों के समान एनआईओएस एक राष्ट्रीय बोर्ड है।

घातक ध्वनि प्रदूषण

❐ विजन कुमार पाण्डेय

वर्तमान समय में हम शोर भरी दुनिया में जी रहे हैं। चारों तरफ शोर ही शोर है।

'नीरवता कुछ गाती है' – किसी कवि की इस पंक्ति का भाव है कि नीरवता का भी अपना एक संगीत होता है जो मन–प्राणों को एक अद्‌भुत शान्ति प्रदान करता है। आधुनिक युग में यह नीरवता निःशब्दता या शान्ति अत्यन्त दुर्लभ है। अंग्रेजी में जिसे हम 'पिनड्राप साइलेन्स' कहते हैं, ऐसी शान्ति कहीं नहीं है। ध्वनि पैदा करना मानव और जीवजन्तुओं का प्राकृतिक गुण है। प्रकृति में भी पत्तों की मर्मर, सागर की गर्जना व झरनों–नदियों की कल–कल स्वाभाविक ध्वनियां हैं जो मन को सुकून देती हैं। जहाँ तक ध्वनियों का प्रश्न है वे निरर्थक और सार्थक दो प्रकार की होती हैं। सार्थक ध्वनियों के द्वारा हम विचारों का आदान–प्रदान करते हैं। शब्द या स्फोट को भारतीय दर्शन में अक्षर (जिसका क्षरण नहीं होता) माना गया है। इसीलिए हमारे यहां काव्य में भी 'शब्द–शक्ति' की बात कही जाती है। 'नादब्रह्म' शब्द का प्रयोग भी इसी भावना को दर्शाता है। एक आधुनिक सृष्टि सम्बन्धी सिद्धान्त के अनुसार यह ब्रह्माण्ड 'बिगबैंग' (महास्फोट) से अस्तित्व में आया है। बाइबिल में भी कहा गया है कि प्रारम्भ में केवल शब्द था। वैज्ञानिक सिद्धान्त हों या राजनैतिक विचारधारा का निर्माण अथवा आध्यात्मिक रहस्य सबको मानव ने शब्दों के माध्यम से समझा–समझाया है। **अवांछित ध्वनि को शोर कहा जाता है।**

ध्वनि का वैज्ञानिक आधार

ध्वनि एक प्रकार की तरंग है, कंपन है। जब भी कोई वाद्ययंत्र झंकृत होते हैं तो ये चारों ओर की वायु को पहले संकुचित करते हैं फिर उसे विस्तारित कर देते हैं। इससे जो ध्वनि लहरें उत्पन्न होती हैं वे 300 मीटर प्रति सेकेण्ड की दर से आगे बढ़ती हैं। तरंगों के रूप में आने वाली ध्वनि हमारे कान के पर्दे से टकराती है। वहां से कुछ सूक्ष्म संरचनाओं से होती हुई श्रवणतंत्रिका तक पहुंचती है। यह तंत्रिका इसे मस्तिष्क के श्रवण केन्द्र तक पहुंचाती है। तब हमें आवाज सुनाई देती है। कर्णकुहरों के भीतर की सूक्ष्म संरचनाओं में अत्यन्त बारीक रेशे होते हैं जो अत्यधिक तेज आवाज के कारण नष्ट हो जाते हैं। हमारे कान अधिक से अधिक 80 डेसीबल तक की ध्वनि तीव्रता सहन कर सकते हैं। इससे अधिक तीव्र ध्वनि मनुष्य के स्वास्थ्य पर विविध आयामी कुप्रभाव डालती है। अप्रिय पर्यावरण शोर मानव तथा पशु जीवन के संतुलन को बिगाड़ रहा है।

शोर के कुछ मुख्य स्रोत

शोर आधुनिक जीवन की देन है। मोटर बाइक, कार, बस, ट्रक, रेल, वायुयान, मशीन आदि इसके कुछ मुख्य कारक हैं। आवागमन के जितने भी सामान्य साधन हैं इनमें अन्तर्दहन इंजन होते हैं जिनमें ईंधन जलने पर तेज आवाज होती है। तरह तरह की कर्कश ध्वनियों

❐ विजन कुमार पाण्डेय, बड़ी बाग लंका मैदान, (मजार के पास), गाजीपुर–233001 (उ.प्र.) मोबाइलः 09450438017, 09918401362 प्रिंसिपल, जे.जे. इन्टर कॉलेज, गुरमा, (सोनभद्रा)

वाले हार्नों का तो आज बहुत फैशन है। ध्वनि के वेग से तेज चलने वाले वायुयान, अन्तरिक्षयान तथा कृत्रिम उपग्रहों को छोड़ने के लिए जिन रोकेटों का प्रयोग किया जाता है, वे भी ध्वनिप्रदूषण बढ़ाते हैं। महानगरों में भवननिर्माण या सड़क निर्माण कार्य चलते ही रहते हैं, इनमें काम आने वाले रोलर भी खूब शोर करते हैं।

उद्योगों में प्रयोग होने वाली मशीनों, कारखानों में तरह–तरह के यंत्र तथा गलीमुहल्लों में फेरी लगाने वाले लोग कोलाहल में वृद्धि करते हैं। विस्फोटक हथियारों तथा बमों आदि से उत्पन्न होने वाली ध्वनियां बहुत तीव्र होती हैं। हमारे घर भी आजकल ध्वनिप्रदूषण मुक्त नहीं रह गये हैं। रेडियो, टी.वी., वी.सी.आर. जैसे मनोरंजन के साधन भी कम शोर नहीं करते। रही सही कसर केबल टी.वी. ने पूरी कर दी है जिससे दिन–रात कार्यक्रम चलते ही रहते हैं। मिक्सर, ग्राइन्डर, वैक्यूमक्लीनर, एयरकन्डीशनर, कूलर जैसे घरेलू उपकरण भी शोर पैदा करते हैं।

कितना घातक है शोर

अप्रिय पर्यावरण शोर मानव तथा पशु जीवन के संतुलन को बिगाड़ रहा है। नवजात शिशुओं के स्वास्थ्य पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। शिशुओं में अनेक शारीरिक विकृतियां इसी के परिणामस्वरूप होती हैं। मनुष्यों में बढ़ती अनिद्रा, बधिरता, सिरदर्द, उच्च रक्तचाप, तनाव और चिड़चिड़ापन जैसे अनेक रोगों के मूल में ध्वनि प्रदूषण का ही कुप्रभाव होता है। मनुष्य की सामान्य नींद पर भी शोर के दुष्प्रभाव के सतत् और स्पष्ट कारण हैं। नींद लाने वाली दवाइयों का अधिकाधिक प्रयोग इसीलिए बढ़ रहा है। कोलाहल का तनाव से सीधा संबंध है। अत्यधिक तेज शोर से मनुष्य की धमनियाँ सिकुड़ जाती हैं। शोर से हृदय की धड़कन बढ़ जाती है, आंखों की पुतलियां चौड़ी हो जाती हैं तथा पेट में विकार पैदा होते हैं। पेट में अल्सर, दांतों का कमजोर होना, दमा होना भी शोर के कारण पाया गया है। आधुनिकतम खोजों का निष्कर्ष है कि शोर की निरंतर अधिकता से मनुष्य के शरीर में कैंसर जैसे महारोग पनपते जा रहे हैं।

हाल ही में किये गये शोध से प्राप्त निष्कर्ष चौकाने वाले हैं। स्वीडन में 18–20 वर्ष की आयु के किशारों में से 80 प्रतिशत की श्रवणशक्ति शोर से प्रभावित पाई गई। जर्मनी में साढ़े छः करोड़ की आबादी में से करीब 30 लाख लोग ऐसी जगह रहते हैं जहां शोरगुल का स्तर बहुत अधिक है। यह पाया गया है कि भारत में भी दस प्रतिशत शहरी लोग और आठ प्रतिशत ग्रामीण लोग श्रवण विकारों से पीड़ित हैं। कई महानगर भी ध्वनि प्रदूषित हैं। दिल्ली और मद्रास में ध्वनि का स्तर 89 डेसीबल, कोलकाता का 88 डेसीबल और मुम्बई का 86 डेसीबल है। 'रिये डी जिनेरियो' विश्व का सर्वाधिक ध्वनि प्रदूषित शहर है, जहाँ ध्वनि का स्तर 120 डेसीबल है। मनुष्य ही नहीं पशु–पक्षियों, पेड़े–पौधों तथा यहां तक कि जड़ पदार्थों पर भी ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव होता है।

शब्द शक्ति का प्रभाव

वैज्ञानिकों का कथन है कि शब्द–शक्ति से इलेक्ट्रोमैग्नेटिक (विद्युतचुम्बकीय) लहरें उत्पन्न होती हैं। ये तरंगें स्नायुतन्त्र पर वांछित प्रभाव डालकर उनकी सक्रियता बढ़ातीं हैं और मनोविकारों को मिटाती हैं। वास्तव में वाणी नहीं, ऊर्जा क्रियाशील होती है। ऊर्जाविहीन वाणी प्रभावहीन होती है। ऊर्जा के स्त्रोत से जुड़ी वाणी (शब्द) की क्रियाशीलता त्वरित होती है। इसका प्रभाव भी व्यापक एवं गहरा होता है। कुछ भी और कैसा भी बोला जाए, इसका प्रभाव अचूक होता है। यदि वाणी में ऊर्जा का भंडार है तो इसकी क्रियाशीलता को कोई रोक नहीं सकता। इसीलिए तो कहा जाता है कि तपस्वी की वाणी आग्नेयास्त्र, ब्रह्मास्त्र के समान कार्य करती है और उसके प्रयोग से प्रकृति में परिवर्तन होने लगते हैं। अतः शब्द शक्ति का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए।

शोर पर नियंत्रण जरूरी

आज हमारे जीवन में शोर इस सीमा तक व्याप्त हो गया है कि उसे पूर्णरूप से दूर कर पाना हमारे नियन्त्रण में

नहीं रहा। इक्कीसवीं सदी में शोर की मात्रा बढ़ती ही जाएगी। उसके लिए उपाय खोजा जाना जरूरी है। आवश्यक है कि कुछ नियम–कानून बनाकर तथा उनका निश्चित रूप से पालन करवाकर शोर के दानव को पंजे फैलाने से रोका जाये। एक अच्छे और जागरूक नागरिक के रूप में हमारा कर्तव्य है कि हम रेडियो तथा टेलीविजन की आवाज को नियंत्रित रखें। गाड़ियों के हार्न बिना जरूरत के न बजाएं। सड़क के वाहनों में ध्वनिस्तर कम करने के लिए अच्छी प्रकार के साइलेन्सर लगाए जाएं। शोर वाले कारखानों में इन्सुलेटिंग तकनीक का प्रयोग किया जाए। शोर जैसे प्रदूषण को और भी हानिकारक बनाने में दूसरे प्रदूषणों का भी कम हाथ नहीं होता। तापमान की वृद्धि, हवा का शुद्ध न होना, प्राकृतिक सौन्दर्य का अभाव भी शोर का अहसास अधिक करवाते हैं। हम अधिक पेड़ पौधे लगाकर पृथ्वी को हराभरा रखें क्योंकि वृक्ष, वनस्पतियां और वन भी कोलाहल को अवशोषित करते हैं। विकासशील और विकसित दोनों ही तरह के देश आज ध्वनिप्रदूषण के खतरों से घिरे हुए हैं। बहुत से विकसित देशों में ध्वनि–प्रदूषण के लिए बाकायदा कानून बने हुए है। भारत में भी हम व्यक्तिगत, सामाजिक तथा प्रशासनिक स्तर पर जागरूक रहकर ध्वनि प्रदूषण के घातक प्रभावों से बच सकते हैं।

❐

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान की वर्तमान स्थिति

(संदर्भ- एनआईओएस प्रोस्पैक्ट्स 2010-11)

- विश्व की सबसे बड़ी मुक्त विद्यालयी शिक्षा प्रणाली।
- वर्ष 1990 से माध्यमिक तथा उच्चतर माध्यिमिक और व्यावसायिक स्तर पर 21,08,973 शिक्षार्थियों को प्रमाणपत्र दिए गए।
- प्रत्येक वर्ष 4,00,000 से अधिक शिक्षार्थी प्रवेश लेते हैं।
- देशभर में तथा विदेशों में फैले लगभग 5911 अध्ययन केन्द्रों (एआई/एवीआई/एएएस) के नेटवर्क के माध्यम से सभी तक पहुँचने की कोशिश।
- स्व–अध्ययन मुद्रित सामग्री, ऑडियो, वीडियो, टीवी तथा सीडी रोम और एआई पर व्यक्तिगत संपर्क कार्यक्रम का सहयोग लेकर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना। साथ ही रेडियो प्रसारणों और टी.वी. कार्यक्रमों का भी सहयोग लेना।

उपभोक्तावादी संस्कृति का पर्याय–इलेक्ट्रॉनिक कचरा

❐ डॉ. रीति थापर कपूर

हम लोग आपदाओं के दौर में जी रहे हैं। विकासशील देशों में प्राकृतिक और मानव–निर्मित आपदाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है, जिसके कारण जहाँ एक ओर हजारों लोग अकाल मृत्यु का शिकार हो जाते हैं, वहीं दूसरी ओर सम्पत्ति और आधारभूत संरचनाओं का ह्रास होता है। प्राकृतिक आपदाओं के अन्तर्गत बाढ़, भूकम्प, सुनामी और ज्वालामुखी विस्फोट आदि आते हैं। वहीं इलेक्ट्रॉनिक कचरे (ई. –कचरे) को मानव निर्मित आपदा की संज्ञा दी जा सकती है। यदि समय रहते इसका प्रबंधन न किया गया, तो भविष्य में यह एक बड़ी पर्यावरणीय त्रासदी के रूप में सामने आएगी।

प्रकृति के साथ मनुष्य का सीधा संबंध है। सभ्यता के आरम्भ में मनुष्य का प्रकृति के साथ आत्मीयता का संबंध था। लेकिन आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस युग में मनुष्य इतना बदल गया है कि अब वह प्रकृति को मात्र दोहन का स्रोत समझने लगा है। उपभोक्तावादी संस्कृति को अपनाते हुए मानव प्रकृति के संसाधनों का इतना अधिक दोहन करने लगा है, कि आज ये प्राकृतिक संसाधन समाप्त होते जा रहे हैं और हमारा पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय अर्थव्यवस्था विकास के नए मार्ग पर अग्रसर हुई है, लेकिन बढ़ती जनसंख्या, नगरीकरण और औद्योगिकीकरण ने अनेक प्रकार की नई पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म दिया है जिसमें जलवायु परिवर्तन और अनेक दुर्लभ पौधों और जन्तुओं का लुप्त होना आदि घटनाएं प्रमुख हैं।

पिछले कुछ वर्षो में मानव जीवन–शैली में बहुत परिवर्तन आया है। कुछ वर्ष पहले मानव की आवश्यकताएं सीमित थीं और उसका जीवन संतुलित था। लेकिन आज विकास के नाम पर मानव अधिक सम्पन्न जीवन व्यतीत करना चाहता है। मनुष्य की आवश्यकताएं निरन्तर बढ़ती जा रही हैं और वह अधिक साधनों का लाभ उठाना चाहता है। आधुनिकता की इसी दौड़ ने मनुष्य के समक्ष इलेक्ट्रॉनिक–कचरे की नई समस्या को खड़ा कर दिया है। हमारे चारों ओर इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का ही बोलबाला है और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनिक सामनों का उपयोग हो रहा है। संचार–क्रांति के फलस्वरुप इलेक्ट्रॉनिक सामानों के उपयोग से हमें अपने जीवन को सुखमय बनाने में निःसंदेह भरपूर मदद मिली है, किन्तु आज मनुष्य इन वस्तुओं के उपयोग से उन पर इतना अधिक निर्भर हो गया है कि ये हमारी जीवन शैली का अभिन्न अंग बनती जा रही है, और मानव को इनके बिना क्षण भर भी जीवन बिताना कठिन लगता है। तेजी से बढ़ती हुई इलेक्ट्रॉनिक सामनों की खपत ने देश को ई–कचरे की चपेट में ढकेल दिया है, जिससे फिलहाल निजात पाना कठिन लगता है।

क्या है ई–कचरा?

पिछले कुछ वर्षों में बिजली से चलने वाले उपकरणों के उत्पादन और उपयोग में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। ई–कचरा यानि वेस्ट इलेक्ट्रॉनिक एण्ड इलेक्ट्रिकल

❐ डॉ. रीति थापर कपूर, प्रवक्ता, एमिटी बायोटैक्नोलॉजी संस्थान, एमिटी विश्वविद्यालय, नोएडा–201303, उत्तर प्रदेश
आवासः

इक्विपमेंट का अभिप्राय उन पुराने बेकार पड़े हुए बिजली के उपकरणों से है जिन्हें उपयोग करने के पश्चात् फेंक दिया जाता है। इनके अन्तर्गत वे सारे विद्युतीय उपकरण आते हैं जिनका उपयोग घर या दफ्तर में किया जाता है। ई–कचरे की सूची में उपकरणों को विभिन्न श्रेणियों में बांटा गया है: बड़े घरेलू उपकरण जैसे कम्प्यूटर, टेलीविजन, सी.डी./डी.वी.डी. प्लेयर। छोटे घरेलू उपकरण जैसे इलेक्ट्रॉनिक रेफ्रिजरेटर्स, लेपटॉप, इलेक्ट्रॉनिक कैमरा, फोटोकॉपी मशीन; आई.टी. और दूरसंचार उपकरण जैसे मोबाइल फोन; प्रकाश उत्पन्न करने वाले उपकरण जैसे सी.एफ.एल., इन्वर्टर, बैटरी मनोरंजन और चिकित्सा संबंधी उपकरण आदि। इन इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का इस्तेमाल पूरी दुनिया में हो रहा है। नित नए शोध कार्यों और कंपनियों द्वारा बाजार में नए उत्पादों की बिक्री के कारण शीघ्र ही नए इलेक्ट्रॉनिक उपकरण बाजार में आम जनता के लिए उपलब्ध हो जाते हैं, जिससे कि पुराने इलेक्ट्रॉनिक उपकरण बहुत कम समय में बाजार से बाहर हो जाते हैं और इनका स्थान नए नए उत्पाद ले लेते हैं। इस कारण इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की आयु निरन्तर घटती जा रही है। एक सर्वेक्षण के अनुसार कभी–कभी इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की आयु दो वर्ष से भी कम होती है। हाल ही में किए गए शोध के अनुसार भारतवर्ष में सन् 2008–2009 में लगभग 68 लाख डेस्कटॉप और लैपटॉप की बिक्री हुई वहीं अगले ही वर्ष सन् 2009–2010 में यह बिक्री दुगुनी से भी अधिक हुई। आंकड़ों के अनुसार भारतवर्ष में डेस्कटॉप और लैपटॉप की बिक्री पश्चिम भारत में 37 प्रतिशत, दक्षिण भारत में 23 प्रतिशत, पूर्व भारत में 22 प्रतिशत, और उत्तर भारत में लगभग 18 प्रतिशत है।

हमारे देश का लगभग 80 प्रतिशत ई–कचरा देश के मुख्यतः दस राज्यों से आता है। सबसे ज्यादा ई–कचरा पैदा करने वाले राज्य महाराष्ट्र, दिल्ली, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और पंजाब हैं और सबसे अधिक ई–कचरा पैदा करने वाले शहर मुख्यतः मुम्बई, दिल्ली, बंगलुरु, चेन्नई, कोलकाता, अहमदाबाद, हैदराबाद, पुणे, सूरत और नागपुर हैं।

ई–कचरे का संगठन

ई–कचरे में लगभग एक हजार से अधिक अवयव पाए जाते हैं। जिनमें से अधिकांश अवयव हानिकारक होते हैं। इलेक्ट्रॉनिक कचरे में लगभग 30 प्रतिशत प्लास्टिक और 60 प्रतिशत भारी धातुएं तथा 10 प्रतिशत अन्य हानिकारक तत्व पाए जाते हैं। ई–कचरे में अनेक प्रकार के विषाक्त तत्व जैसे सीसा, पारा, क्रोमियम, कैडमियम, अर्सेनिक तथा सैलेनियम आदि पाए जाते हैं। इसके अलावा कुछ मात्रा में कीमती तत्व जैसे सोना, चाँदी, प्लेटिनम, तांबा और एल्युमिनियम आदि भी उपस्थित रहते हैं।

देश में इलेक्ट्रॉनिक कचरे का बढ़ता हुआ खतरा

बेसल एक्शन नेटवर्क (बी.ए.एन.) की रिपोर्ट के अनुसार विकासशील देशों में ई–कचरे की बढ़ती हुई समस्या

का मुख्य कारण विकसित देश हैं। विकसित देशों में नई तकनीकों और साधनों के विकास के कारण शीघ्र ही नए और अधिक सक्षम उत्पाद बाजार में उपलब्ध हो जाते हैं, जिससे पुराने उपकरणों का प्रयोग घट जाता है। विकसित देशों में रिसाइकलिंग की व्यवस्था अधिक मंहगी होने के कारण ये देश अन्य विकासशील देशों को दान के नाम पर पुराने इलेक्ट्रॉनिक उपकरण उपलब्ध कराते हैं। इसके कारण जहाँ एक ओर विकासशील देशों में अपने देश में उत्पन्न ई–कचरे की समस्या का हल नहीं हो पा रहा, वहीं विकसित देशों द्वारा भेजा गया ई–कचरा विकासशील देशों में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को और अधिक जटिल बना देता है। हाल ही में अमेरिका द्वारा 50–70 प्रतिशत ई–कचरे को अनेक विकासशील देशों जैसे भारत, नाईजीरिया, चाईना, ताईवान और अफ्रीका आदि में भेजने की खबर प्रकाश में आई है।

इलेक्ट्रॉनिक कचरे के प्रदूषण का मानव जीवन पर प्रभाव

हमारे देश में ई–कचरे के निदान और पुनः उपयोग की दिशा में पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक कचरे में अधिकांश तत्व बहुत हानिकारक होते हैं। यदि इनका निबटान सही तरीके से न किया जाए तो ये मनुष्य के स्वास्थ्य और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। ई–कचरे में उपस्थित भारी धातुएं मनुष्यों में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करती हैं जैसे जिंक से बुखार, कफ बनना, तांबा व लेड से मानसिक कमजोरी,

एल्युमिनियम से याददाश्त कमजोर होना, पारा से नपुंसकता और मानसिक संतुलन खराब होना तथा कैडमियम से लीवर व फेफड़ों के रोग हो सकते हैं। कोबाल्ट और बेरीलियम से कैंसर जैसे घातक रोग हो जाते हैं। हमारे देश में ई–कचरे को अब तक सामान्य कचरे की तरह ही निबटाया जा रहा है।

अधिकांश ई–कचरे को अन्य घरेलू कचरे के साथ जमीन के नीचे दबा दिया जाता है या फिर जला दिया जाता है। लैंडफिलिंग में निबटाया गया ई–कचरा वहां की मिट्टी में अनेक प्रकार की घातुओं का रिसाव करता है, जिससे उस स्थान की मिट्टी में भारी धातुओं की मात्रा बहुत अधिक हो जाती है और धीरे–धीरे ऐसी भूमि कृषि योग्य न रहने के कारण बंजर भूमि में परिवर्तित हो जाती है। वहीं दूसरी ओर ई–कचरे को उच्च ताप पर जला दिया जाता है, जिससे भारी धातुओं के जलने पर अनेक प्रकार की खतरनाक गैसें जैसे डाई ऑक्सिन और फ्यूरॉन आदि पैदा हो जाती हैं, जो सम्पूर्ण पर्यावरण को प्रदूषित कर देती हैं। जलने के पश्चात् भी ई–कचरे में उपस्थित भारी धातुएं नष्ट नहीं हो पाती और ये तत्व लम्बे समय तक वातावरण में उपस्थित रहते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार वर्तमान समय में कुल ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का लगभग 2 प्रतिशत भाग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के उपयोग द्वारा उत्सर्जित हो रहा है जो भविष्य में ग्लोबल वार्मिंग की समस्या को अधिक जटिल बना सकता है।

इलेक्ट्रॉनिक कचरे का प्रबन्धन

भारत सरकार ने ई–कचरे के सुरक्षित प्रबंधन के लिए अनेक प्रकार के नियम बनाए हैं। इन नियमों में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की रिसाइकिलिंग पर बल देने की बात कही गई है।

इन नियमों के अनुसार बिजली से चलने वाले उपकरणों की रिसाइकिलिंग करने वाली ईकाइयों को केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड में पंजीकरण कराना होगा। पर्यावरण मंत्रालय ने भी ई–कचरे के सुरक्षित निबटान के लिए विशेष दिशा–निर्देश जारी किए हैं, जो पर्यावरण मंत्रालय

और केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की वेबसाइट www.envfor.nic.in और w.cpcb.nic.in पर उपलब्ध हैं। आज हमारे देश में अनेक गैर–सरकारी और स्वैच्छिक संगठन (एन.जी.ओ.) भी ई–कचरे से निबटने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। पर्यावरण के विषय में आज जनता में जागरुकता उत्पन्न करने के लिए टॉक्सिक लिंक, क्लीन इंडिया, इंडियन एन्वायरमेन्टल सोसायटी और नेशनल सॉलिड वेस्ट एसोशिएशन ऑफ इंडिया का नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय है। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरित मानस' में भी यह कहा गया है कि पर्यावरण को संतुलित एवं सुरक्षित रखने का दायित्व राजा एवं प्रजा दोनों का है। अतः केवल सरकार एवं अन्य स्वैच्छिक संगठनों का ही यह दायित्व नहीं है कि वे वातावरण को स्वच्छ रखें बल्कि यह आम नागरिकों का भी दायित्व है कि वे अपने पर्यावरण से प्रेम करें और उसे सुरक्षित रखने में अपनी भूमिका निभाएं।

ग्रीनपीस नामक एक गैर सरकारी संगठन ने कहा है कि इलेक्ट्रॉनिक एवं इलेक्ट्रिकल उत्पादों से जुड़ी कंपनियों को विश्व स्तर पर अपने सभी ग्राहकों को पुराना या खराब सामान वापस लेकर उसे रिसाइकिलिंग की प्रक्रिया में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। अभी केवल नोकिया कम्पनी अपने पुराने इलेक्ट्रॉनिक सामान (जैसे–मोबाइल और इसके अन्य भाग) वापस लेकर उसकी रिसाइकिलिंग करने के प्रयास कर रही है। लेकिन नोकिया कम्पनी के अनुसार भारत में केवल 17 प्रतिशत और यू.के. में 80 प्रतिशत लोगों को यह जानकारी है कि खराब मोबाइल फोन की रिसाइकिलिंग करके इसमें लगे हुए आवश्यक भागों को फिर से काम में लाया जा सकता है।

इलेक्ट्रॉनिक कचरे को नियंत्रित करने के उपाय

निरन्तर बढ़ती हुई ई–कचरे की समस्या और इसके दुष्प्रभाव के बारे में आज आम जनता में जागरुकता फैलाने की आवश्यकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को बनाने वाली उत्पादक कम्पनियाँ अपने उपकरणों की निर्देश पुस्तिका एवं डिब्बों के ऊपर ई–कचरे से संबंधित जानकारी दें। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है, कि इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को बनाने के लिए बॉयोप्लास्टिक और अन्य ग्रीन/पर्यावरण अनुकूल तकनीकों का उपयोग करना चाहिए। इसके साथ ही इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के निर्माण और रिसाइकिलिंग में लगे हुए कर्मचारियों को भी ई–कचरे के हानिकारक प्रभावों और सुरक्षा के नियमों की जानकारी होनी चाहिए। ई–कचरे की रिसाइकिलिंग करने वाली ईकाइयों को जिला व तहसील स्तर पर कुछ सार्वजनिक स्थानों पर ई–कचरा बिन की व्यवस्था करनी चाहिए। मीडिया द्वारा आज जनता में ई–कचरे से होने वाली हानि और मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव से सम्बंधित जागरुकता उत्पन्न की जा सकती है, जिसमें टेलीविजन, रेडियो, समाचार–पत्र और पत्रिकाएं अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

विश्व स्तर पर ई–कचरे की जानकारी को सूचना–पटल पर उपलब्ध कराना चाहिए। सरकार द्वारा ई–कचरे की रिसाइकिलिंग के लिए कड़े नियम बनाने चाहिएं, और उन्हें पूर्ण रुप से लागू करना चाहिए। यदि आम जनता द्वारा या फिर इलेक्ट्रॉनिक उत्पादकों द्वारा ई–कचरे के लिए बनाए गए नियमों की अवहेलना की जाती है, तो ऐसी स्थिति में कड़े दंड की भी व्यवस्था होनी चाहिए। अतः अन्त में हम कह सकते हैं कि आम जनता, इलेक्ट्रॉनिक सामानों के उत्पादक और उपभोक्ता एवं सरकार को मिलजुल कर कार्य करना होगा, तभी हम अपने पर्यावरण को ई–कचरे से मुक्त कर पाएगें।

❐

अंतरात्मा को न तो मैंने देखा है न जाना है। संसार की ईश्वर पर जो श्रद्धा है मैंने अपनी बना ली है। यह श्रद्धा ऐसी नहीं है जो किसी प्रकार मिटाई जा सके। इसलिए वह अब मेरे नजदीक श्रद्धा नहीं, बल्कि अनुभव हो गया है। फिर भी अनुभव के रूप में उसका परिचय कराना एक प्रकार के सत्य पर प्रहार करना है, इसलिए यही कहना शायद अधिक उचित होगा कि उसके शुद्ध रूप का परिचय देने वाला शब्द मेरे पास नहीं है।

–महात्मा गांधी *(आत्मकथा, पृष्ठ 308, 309)*

पृथ्वी पर नीला सोना–पानी

❐ डॉ. दीपक कोहली

पृथ्वी का 'नीला सोना' (Blue Gold) अर्थात पानी या जल जीवन का मूलभूत आधार है। **'पानी है तो प्राण है'** की उक्ति सर्वविदित है। हाइड्रोजन के दो तथा आक्सीजन के एक परमाणु से बना जल (H_2O) एक साधारण यौगिक है। इसे जिस पात्र में रखें, यह वैसा ही आकार ग्रहण कर लेता है। अनेक मायनों में इसके गुणों में ही विरोधाभास है। जहां एक ओर जल के बिना हमारा जीवन असंभव है वहीं दूसरी ओर जल का आधिक्य भी हमारे ऊपर मृत्यु का कहर ढा देता है। कहीं जल की कमी से त्राहि–त्राहि तो कहीं बाढ़ और अतिवृष्टि का प्रकोप। है न विचित्र बात। परन्तु जन–जीवन और जीविका के लिए जल अनिवार्य रूप से आवश्यक है। मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ जनसंख्या और जल–संसाधनों के पारस्परिक संबंधों में परिवर्तन होता रहा है। विश्व के विभिन्न स्थानों में प्रारंभिक मानव सभ्यताएं प्रमुख नदियों के किनारे ही विकसित हुई ताकि जल की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित रहे। आदिम समुदायों में पानी केवल जीने के लिए जरूरी था। लेकिन, अब तो आर्थिक विकास के लिए भी पानी महत्वपूर्ण हो गया है।

पृथ्वी पर कुल पानी की मात्रा एक अरब चालीस करोड़ घन किलोमीटर आंकी गई है। धरती पर जितना पानी उपलब्ध है, उसमें से लगभग 2.8 प्रतिशत ही मीठा पानी है और मनुष्य की खपत के योग्य है। बाकी 97.2 प्रतिशत जल खारा है। और समुद्रों में भरा है। धरती के मीठे पानी के संसाधन भी अधिकतर बर्फीली चोटियों, हिमनदों और भू–जल के रूप में हैं। पृथ्वी की मीठे पानी की कुल जल–संपदा का बहुत थोड़ा हिस्सा ही नदियों, झीलों और अन्य जल–स्रोतों में मिलता है। नदी की धाराओं का पानी नवीनीकरण जल–संसाधन है और यही विश्व की खपत का सबसे बड़ा हिस्सा है। प्रति वर्ष कुल 43,000 घन किलोमीटर होता है, जो कि धरातल की कुदरती झीलों के पानी का लगभग आधा और सभी मानव–निर्मित जलाशयों के आयतन का लगभग दस गुना है। जल की प्रति व्यक्ति उपलब्धता जल–भंडारण की क्षमता पर निर्भर है। विकासशील देशों की तुलना में विकसित देशों में जल–भंडारण की क्षमता काफी ज्यादा है। उदाहरण के लिए भारत की जल–भंडारण क्षमता 213 घन मीटर है, जबकि इसके मुकाबले आस्ट्रेलिया की 4,733 घन मीटर और अमेरिका की 1,964 घन मीटर है।

भारत में एक वर्ष के कुल 8760 घंटों में 100 घंटे वर्षा होती है। जो लगभग 40 करोड़ हेक्टेयर मीटर है। इसमें से प्रतिवर्ष लगभग 15 करोड़ हेक्टेयर मीटर जल का निस्पंदन होता है। जिसमें से 4 करोड़ हेक्टेयर मीटर भूमिगत जल में प्रतिवर्ष पहुंचता रहता है। लगभग 7 करोड़ हेक्टेयर मीटर जल का वाष्पन होता है। पृष्ठीय बहाव के द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 18 करोड़ हेक्टेयर जल पोखरों, जलाशयों, नदियों, नालों से होता हुआ सागर में जाता रहता है। कुल पृष्ठीय बहाव के जल का लगभग एक करोड़ दस लाख हेक्टेयर मीटर जलाशयों में रहता है। इसका 4 से 5 प्रतिशत तालाबों में भरा रहता है। इन आंकड़ों से यह स्पष्ट है कि कुल पृष्ठीय बहाव का लगभग दस प्रतिशत से कम जल ही संरक्षित रहता है। लगभग एक करोड़ दस लाख हेक्टेयर मीटर जल मृदा–जल के रूप में परिच्छेदिका (Soil Profile) में रहता है। दूसरे शब्दों में कहें तो 40 करोड़ हेक्टेयर मीटर वार्षिक वर्षा का लगभग 45 प्रतिशत पृष्ठीय बहाव, 27.5 प्रतिशत भूमि परिच्छेदिका में, 17.5 प्रतिशत वाष्पीकरण के द्वारा वायुमंडल में तथा मात्र 10 प्रतिशत भूमिगत जल में जा मिलता है।

❐ डॉ. दीपक कोहली, 5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ–226010 (उ.प्र.) फोनः 0522–2303520, 2067117.

पृथ्वी के जल चक्र को दो भागों में विभाजित करके दो नामों से जाना जा सकता है:

पहला, हरित जल (Green water) वर्षा का जल भूमि में प्रवेश करता है तथा वनस्पतियों में रहता है तथा वाष्पोत्सर्जन (Transpiration) से पुनः वायुमंडल में जा मिलता है। दूसरा, वर्षा जल का वह भाग जो भूमि से होता हुआ तालाबों, नदियों, नालों तथा सागर में जा मिलता है अथवा भूमिगत जल में मिलता है। इसे नीला जल (Blue water) कहा जा सकता है। दोनों प्रकार के जल का सही प्रबंधन करके जल असंतुलन से बचा जा सकता है।

पानी की मुख्य रूप से तीन क्षेत्रों में भारी मांग रहती है– कृषि, उद्योग और घरेलू मांग। विश्व की जनसंख्या बढ़ने के साथ–साथ पानी की मांग भी बराबर बढ़ती रही है। सन् 1999 में विश्व की जनसंख्या 6 अरब के पार पहुंच गई और सन् 2050 तक 10 अरब हो जाएगी। मानव के कार्य–कलापों में बढ़ती हुई विविधता के कारण भी पानी की मांग बढ़ गई है।

इस समय मानवता के सामने **वैश्विक जल–संकट** सबसे बड़ी समस्या है। विश्व बैंक, यू0एन0, तथा आई. एम.एफ. के अनुसार विश्व का 1/6 भाग जल रहित हो चुका है। 31 देशों में घोर जल संकट है। 2025 तक हालात भयावह होंगे। 2050 तक दुनिया के 50 देशों में यह संकट और गहरायेगा। टिकाऊ और सुरक्षित पेय जल की आपूर्ति का विकास दुनिया के लिए एक बड़ी चुनौती है। दुर्भाग्यवश विश्व के अनेक भागों में लोग बिना शुद्ध पेय जल के और बिना स्वच्छता के साथ जीवन बिताने को मजबूर हैं। विश्व में जल विकास संबंधी संयुक्त राष्ट्र की तीसरी रिपोर्ट के अनुसार ऐसे लोगों की संख्या 66 करोड़ है। यदि इन लोगों को फलना–फूलना है, तो अधिक सुरक्षित पानी की आपूर्ति उनके लिए सस्ते में करनी होगी। संयुक्त राष्ट्र की जल विकास संबंधी वैश्विक रिपोर्ट हर तीन साल बाद दुनिया में मीठे पानी के संसाधनों के बारे में अधिकृत सर्वांगीण मूल्यांकन प्रदान करती है।

मीठे पानी के वितरण में नदियों के पश्चात सबसे बड़ा योगदान 'भू–जल' का है। यह आकलन किया गया है कि धरती के भू–जल संसाधन लगभग 100 लाख घन किलोमीटर हैं, जो वर्षा से मिलने वाले वार्षिक नवीकरणीय जल–संसाधनों से 200 गुने अधिक हैं। भू–जल के निष्कर्षण से कृषि का विस्तार करना संभव हुआ है, जिसने फिर ग्रामीण विकास और गरीबी घटाने को संभव बनाया। लेकिन यह विस्तार हमेशा जारी नहीं रहेगा। अब ऐसी स्थिति आ गई है कि आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त उपज के साथ भू–जल के निष्कर्षण की आवश्यकताओं को संतुलित करना होगा। लेकिन, यह भी सच है कि भू–जल का अत्यधिक दोहन पर्यावरण को नुकसान पहुंचा रहा है।

सम्पूर्ण विश्व में कृषि क्षेत्र में पानी की खपत बहुत अधिक है। विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों की कृषि अधिक पानी पीती है। विकासशील देशों में मीठे पानी की कुल खपत का लगभग 85 प्रतिशत कृषि–क्षेत्र में खप जाता है। कृषि–क्षेत्र में पानी की मांग और भी बढ़ेगी, क्योंकि अगले 50 सालों में खाद्यान्न की मांग लगभग दुगनी हो जाएगी। खाद्यान्न की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए अतिरिक्त जल की आपूर्ति जल की उत्पादकता बढ़ाए बगैर पूरी नहीं की जा सकती। यह तभी हो सकता है जब खेती के सुधरे तरीके अपनाए जाएं, प्रौद्योगिकी को अधिक उन्नत बनाया जाए और सबसे ऊपर जल–प्रबंधन की उचित तकनीकें प्रयोग में लाई जाएं।

विश्व में औद्योगिक क्षेत्र मीठे पानी के लगभग 22 प्रतिशत की खपत करता है। भारत जैसे विकासशील देशों में भी औद्योगिक क्षेत्र में पानी की मांग में काफी बढ़ोतरी होगी।

अनेक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर पानी के लिए बढ़ती चिंता व्यक्त की जा रही है। इस प्रकार की चिंता विश्व स्तर पर पहली बार स्टॉकहोम में 1972 में संपन्न हुए मानव विकास और पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र ने सन् 2003 को मीठे पानी का अंतर्राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया

था। संयुक्त राष्ट्र की महासभा के 58वें अधिवेशन में 2005 से 2015 तक की अवधि ***'जीवन के लिए जल का अंतर्राष्ट्रीय दशक'*** घोषित की गई थी।

हांलाकि भारत को सबसे जल–बाहुल्य देशों में शुमार किया जाता है, फिर भी यह पानी की गंभीर समस्या से घिरा हुआ है। जनसंख्या का अधिक घनत्व, वर्षाकाल में परिवर्तनशीलता, सतह पर के पानी और भूजल का तेजी से घटते जाना और उसका संदूषण भारत के जल संकट के प्रमुख कारण हैं। इसके अलावा जलवायु परिवर्तन जल–चक्र को भी बदल रहा है।

सबसे बड़ा मुद्दा यह है कि जल–प्रबंधन को फिर से परिभाषित किया जाए। इसके लिए संस्थागत सुधारों की आवश्यकता है। बेहतर जल–प्रबंधन एवं जल–संरक्षण के लिए जनता को जागरूक बनाना और उसे इस ओर शिक्षित करना तथा भागीदारी के लिए प्ररित करना अत्यन्त आवश्यक है। मानव मात्र के लिए सन्देश है कि–

"जल संरक्षण कीजिए, जल जीवन का सार,
जल न रहे यदि जगत में, जीवन है बेकार।"

❐

एनआईओएसः एक अनोखी विद्यालयी शिक्षा प्रणाली

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) की स्थापना सन् 1989 में एक स्वायत्त संस्था के रूप में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा की गई। यह आप जैसे पढ़ने के इच्छुक लोगों के बेहतर भविष्य बनाने के लिए शिक्षा का अवसर प्रदान करता है। एनआईओएस का मिशन सबके लिए शिक्षा है तथा बालिकाओं और महिलाओं, ग्रामीण युवाओं, कार्यरत पुरुषों एवं महिलाओं, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अक्षम व्यक्तियों और अन्य सुविधा वंचित वर्गों को शिक्षित करना ही इसकी विशेष प्राथमिकता है, जो किसी न किसी कारण से औपचारिक शिक्षा प्रणाली द्वारा पढ़ नहीं पाए हैं। एनआईओएस **चौदह** क्षेत्रीय केन्द्रों और भारत, नेपाल तथा मध्य पूर्व में लगभग **तीन हजार** प्रत्यायित संस्थाओं तथा प्रत्यायित व्यावसायिक संस्थाओं, जिन्हें सामान्यतः अध्ययन केन्द्र के रूप में जाना जाता है, के एक नेटवर्क के माध्यम से कार्य करता है। शैक्षिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश केवल ऑन–लाइन के माध्यम से किया जा रहा है।

शिक्षार्थियों की जिम्मेवारीः एक नज़र में

- विवरणिका में दिए गए निर्देशों को ठीक से पढ़े बिना आवेदन–पत्र नहीं भरें।
- आवेदन–पत्र में कोई भी कॉलम खाली न छोड़ें।
- संबंधित कागजातों के बिना आवेदन–पत्र जमा न करें।
- ऐसी झूठी एजेंसियों के बहकावे में नहीं आएँ जो उत्तीर्ण कराने का वादा करती हैं।
- जैसा कि प्रेवश के लिए आवेदन फॉर्म में भी लिखा गया है प्रवेश तथा परीक्षा के लिए निर्धारित शुल्क से ज्यादा किसी को न दें।
- अपने अध्ययन केन्द्र में आयोजित होने वाले प्रत्येक विषय में व्यक्तिगत सम्पर्क कक्षाओं में अवश्य भाग लें जिन्हें सभी एआई को अनिवार्य तौर पर आयोजित कराना होता है।
- नकल करने, अपने स्थान पर दूसरे व्यक्ति से परीक्षा दिलाने जैसे अनुचित साधनों के उपयोग में लिप्त न हों।
- एसएमएस अलर्ट्स के लिए अपनी कार्य कर रही ई–मेल आई डी और मोबाइल नंबर दें।

जीवन का आधारः महासागर

❐ नवनीत कुमार गुप्ता

यह तो हम सभी जानते ही हैं कि समस्त ब्रह्मांड में अभी तक पृथ्वी ही एक ऐसा ज्ञात ग्रह है जहाँ जीवन विविध रूपों में रचा–बसा है। पृथ्वी ग्रह पर जीवन का अस्तित्व यहाँ उपस्थित विभिन्न जटिल व नाजुक प्रणालियों या पारितंत्रों के आपसी समन्वय व संतुलन का परिणाम है। वैसे देखा जाए तो पृथ्वी पर जीवन मुख्यतः तीन तंत्रों स्थलमंडल, वायुमंडल और महासागरों की सहभागिता के कारण ही संभव हुआ है। इस लेख में हम पृथ्वी ग्रह को जीवित ग्रह बनाए रखने में महासागरों की भूमिका और मानवीय गतिविधियों से इस विशिष्ट पारितंत्र पर मंडराने वाले खतरों के साथ उनके जीवनदायी स्वरूप को बनाए रखने में हमारी भूमिका पर चर्चा करेंगे।

समुद्री जल का प्रत्येक कण हमको एक कहानी सुनाने की चेष्टा करता है। इन जल कणों का इतिहास अनादि और अनंत हो सकता है। ये बूंदें कभी उत्तरी या दक्षिणी ध्रुव में जमी बर्फ के रूप में रही हों या उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में भाप के रूप में उपस्थित रही हों। महासागर पृथ्वी पर जीवन का प्रतीक है। पृथ्वी पर जीवन का आरंभ महासागरों से माना जाता है। महासागरीय जल में ही पहली बार जीवन का अंकुर फूटा था। आज महासागर असीम जैवविविधता के भंडार हैं। जीवन और महासागरों के तालमेल को जानने से पहले हम महासागरों की उत्पत्ति को समझने की कोशिश करते हैं। पृथ्वी पर जल और जल से भरे विशाल महासागरों का अस्तित्व भी करोड़ों वर्षों तक चली क्रियाओं का परिणाम है। पृथ्वी के जन्म के समय यानि करीब साढ़े चार अरब वर्ष पहले यहाँ न तो महासागर थे और न ही जीवन। आरंभिक समय में तो पृथ्वी का तापमान इतना अधिक था कि बारिश का पानी तुरंत ही भाप बन जाता था। जैसे–जैसे पृथ्वी का तापमान कम होता गया, वायुमंडल में फैली हुई नमी जल में बदल कर अनवरत वर्षा के रूप में पृथ्वी पर गिरने लगी। इस प्रकार वर्षा का जल पृथ्वी में बने विशालकाय गड्ढों में इकट्ठा होने लगा। इस प्रक्रिया के करोड़ों वर्षों तक जारी रहने के उपरांत महासागरों का जन्म हुआ। इस प्रकार हमारी पृथ्वी का लगभग एक तिहाई भाग पानी से घिर गया और शेष भाग ऊँचाई पर स्थित होने के कारण द्वीपों के रूप में अस्तित्व में आया।

हमारी पृथ्वी का लगभग 71% भाग महासागरों से घिरा है। महासागरों में पृथ्वी पर उपलब्ध समस्त जल का लगभग 97 प्रतिशत जल समाया हुआ है। महासागरों की विशालता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि यदि पृथ्वी के सभी महासागरों को एक विशाल महासागर मान लिया जाए तो उसकी तुलना में पृथ्वी के सभी महाद्वीप एक छोटे से द्वीप से साबित होंगे। **मुख्यतया पृथ्वी पर पाँच महासागर हैं जिनके नाम इस प्रकार हैं– प्रशांत महासागर, हिन्द महासागर, अटलांटिक महासागर, उत्तरी ध्रुव महासागर और दक्षिणी ध्रुव महासागर।**

महासागरों के नीचे भी धरती है। जिस प्रकार धरती पर असंख्य पर्वत एवं खाईयाँ हैं, वैसे ही महासागरों में भी विभिन्न स्थलाकृतियाँ मौजूद हैं। समुद्र का तल अनेक प्रकार का होता है। उसमें पहाड़ियाँ, द्वीप, समतल मैदान, सागर की उठान, निमग्न द्वीप या गयोट शामिल होते हैं। महासागरों के तल को मुख्य रूप से तीन भागों-महाद्वीपीय शेल्फ, महाद्वीपीय ढाल और वितल में बाँटा जाता है। महाद्वीपीय शेल्फ तट से लगा क्षेत्र होता है जिस पर भूमि का प्रभाव पड़ता है। नदियों के जल के साथ आने वाले तत्वों से यह क्षेत्र पौष्टिक तत्वों से समृद्ध रहता है। सूर्य के प्रकाश और पौष्टिक तत्वों की

❐ नवनीत कुमार गुप्ता, परियोजना अधिकारी (एडूसेट), सी–24, विज्ञान प्रसार, कुतुब संस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली–16

पर्याप्ता के कारण इस क्षेत्र में जीवों और वनस्पतियों की प्रचुरता होती है। परंतु मनुष्य के क्रियाकलापों का सबसे अधिक प्रभाव भी इसी क्षेत्र पर पड़ता है। आज महासागरों के तटीय क्षेत्र समुद्र के सबसे अधिक प्रदूषित क्षेत्र हैं।

अपने आरंभिक काल से आज तक महासागर जीवन के विविध रूपों को संजोए हुए हैं। पृथ्वी के विशाल क्षेत्र में फैले अथाह जल का भंडार होने के साथ महासागर अपने अंदर व आसपास अनेक छोटे–छोटे नाजुक पारितंत्रो को पनाह देते हैं जिससे उन स्थानों पर विभिन्न प्रकार के जीव व वनस्पतियाँ पनपती हैं। समुद्र में प्रवाल भित्ति क्षेत्र ऐसे ही एक पारितंत्र का उदाहरण है जो असीम जैवविविधता का प्रतीक है। इसी प्रकार तटीय क्षेत्रों में स्थित मैन्ग्रोव जैसी वनस्पतियों से संपन्न वन क्षेत्र समुद्र के अनेक जीवों के लिए नर्सरी का काम करते हुए उन्हें आश्रय प्रदान करते हैं।

सुंदर और जीवनदायी महासागर

महासागरीय लहरों का राज

हम जानते ही हैं कि पानी की बूंद–बूंद से जीवन पोषित होता है। महासागरों का नाम आते ही हमारे दिमाग में पानी की बड़ी–बड़ी लहरों का दृश्य आता है। जल की इस हलचल का कारण सूर्य है। भूमि की तरह महासागरों की ऊष्मा का आधार भी सूर्य ही है। समुद्र की ऊपरी पर्त सूर्य की गर्मी से गर्म होती रहती है और हवाओं द्वारा उसका मंथन होता रहता है। जिसके परिणामस्वरूप किनारों पर लहरों का जन्म होता है। वास्तव में पानी की लहरें महासागरों की गतिशीलता को अभिव्यक्त करती हैं। महासागरों में लहरें उनकी सतह पर चलने वाली हवाओं के कारण बनती हैं। लेकिन लहरों के माध्यम से जल एक स्थान से दूसरे स्थान तक नहीं जाता जैसा कि धाराओं के माध्यम से होता है। लहर तो जल की ऊपर–नीचे होने वाली गति मात्र है। हवा की गति सामान्य होने पर लहरों की ऊंचाई 2 से 5 मीटर तक होती है लेकिन वायु का वेग अधिक होने पर 10 से 12 मीटर तक ऊंची लहरें उठती हैं। लहरें वायुमंडल और महासागर के आपसी समन्वय का परिणाम होती हैं।

महासागरों में सबसे अधिक ऊष्मा उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में होती है और सबसे कम उष्मा ध्रुवीय क्षेत्रों में। महासागरों में तापमान का प्रभाव समुद्री जल की लवणता, उसमें घुली हुई गैसों और उसके अन्य रासायनिक गुणों पर दृष्टिगोचर होता है। तापमान के अधिक होने पर समुद्री जल में घुली हुई गैसों की मात्रा कम हो जाती है। वर्तमान में वैश्विक गर्माहट यानि ग्लोबल वार्मिंग के चलते ध्रुवीय बर्फ के पिघलने के कारण समुद्रों के जलस्तर में वृद्धि दर्ज की गई है। समुद्र की सतह पर जो जल वाष्प बन कर उड़ जाता है उसके दो लाभ होते हैं। एक तो यह कि जब वह वाष्प वायुमंडल में फैलती है तो ऊष्मा समुद्र से दूर हट जाती है और दूसरा यह कि वायुमंडल में यह भाप ऊष्मा को इकट्ठा करती है। यह तो हम जानते ही हैं कि वाष्प के रूप में जल सामान्य जल की तुलना में अधिक गतिशील होता है। इस प्रकार जो ऊष्मा एक स्थान पर जल में समा जाती है वह वायु के वेग से दूर–दूर के स्थानों तक

पहुँच जाती है और इस प्रकार धरती पर ताप का वितरण होता रहता है।

हालांकि कभी–कभार समुद्रों में भूकंप आने या समुद्रों में स्थित ज्वालामुखीय हलचलों के कारण आने वाली सुनामी लहरें प्रलयंकारी साबित हो सकती हैं जिसके कारण भारी तबाही हो सकती है। 11 मार्च, 2011 को जापान में आई सुनामी ने बहुत बड़े भाग को तहस–नहस कर दिया। इससे पहले भी जब 2004 के दिसम्बर महीने में दक्षिण पूर्व एशिया में प्रलयंकारी सुनामी के कारण लाखों लोगों की मौत होने के साथ एक बड़े क्षेत्र को इस संकट का सामना करना पड़ा था।

लहरें थमी तो थम जाएगा जीवन

अगर किसी कारण से समुद्रों में जीवन रुक जाए तो हमारे वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा तिगुनी हो जाएगी। समुद्र के असंख्य जीव अपने शरीर की संरचना में कार्बन का उपयोग करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप समुद्र के ऊपरी जल व वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड का संतुलन बना रहता है। समुद्र में वायुमण्डल की अपेक्षा लगभग 45 गुना कार्बन समाया हुआ है। पृथ्वी का 70% हिस्सा समुद्र ही है लेकिन अभी इसके कई रहस्यों से पर्दा उठना बाकी है।

समुद्र और मौसम

धरती का मौसम निर्धारित करने वाले कारकों में महासागर प्रमुख हैं। समुद्री जल की लवणता और विशिष्ट ऊष्माधारिता का गुण पृथ्वी के मौसम को प्रभावित करता है। यह तो हम जानते ही हैं कि पृथ्वी की समस्त ऊष्मा में जल की ऊष्मा का विशेष महत्व है। जितनी ऊष्मा एक ग्राम जल के तापमान में एक डिग्री सेल्सियस की वृद्धि करेगी, उससे एक ग्राम लोहे का तापमान दस डिग्री सेल्सियस बढ़ाया जा सकता है। अधिक विशिष्ट ऊष्मा के कारण समुद्री जल दिन में सूर्य की ऊर्जा का बहुत बड़ा भाग अपने में समा लेता है। इस प्रकार अधिक विशिष्ट ऊष्मा के कारण समुद्र ऊष्मा का भण्डारक बन जाता है जिसके कारण विश्व भर में मौसम संतुलित बना रहता है। या यूं कहें कि जीवन के लिए आवश्यक औसत तापमान बना रहता है। मौसम के संतुलन में समुद्री जल की लवणता जीवन के लिए एक वरदान है। पृथ्वी पर जलवायु के बदलने की घटना और समुद्री जल का खारापन आपस में अंतःसंबंधित हैं। यह तो हम जानते ही हैं कि ठंडा जल, गर्म जल की तुलना में अधिक घनत्व वाला होता है। इस तथ्य के आधार पर हम समुद्रों के विभिन्न क्षेत्रों की लवणता में देखे जाने वाले अंतर को समझ सकते हैं। असल में समुद्र में किसी स्थान पर सूर्य के ताप के कारण जल के वाष्पित होने से उस क्षेत्र के जल के तापमान में परिवर्तन होता है जिसके परिणामस्वरूप स्थान विशेश के समुद्री जल की लवणता और आसपास के क्षेत्र की लवणता में अंतर उत्पन्न हो जाता है। यही कारण है कि गर्म जल की धाराएं ठंडे क्षेत्रों की ओर चल देती हैं और ठंडा जल उष्ण और कम उष्ण प्रदेशों में आता है। समुद्र में ये धाराएं केवल इस कारण उत्पन्न होती हैं कि समुद्र का जल खारा है। क्योंकि यदि सारे समुद्रों का जल मीठा होता तो लवणता में भिन्नता कभी न होती और जल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने वाली धाराएं सक्रिय न होतीं। परिणामस्वरूप ठंडे प्रदेश बहुत ठंडे रहते और गर्म प्रदेश बहुत गर्म। महासागरों की औसत लवणता 35 भाग प्रति हजार है। पृथ्वी पर जीवन के इतने रंग न बिखरे होते क्योंकि पृथ्वी की असीम जैवविविधता का एक प्रमुख कारण यह है कि यहां अनेक प्रकार की जलवायु मौजूद है और जलवायु के निर्धारण में महासागरों का महत्वपूर्ण योगदान नकारा नहीं जा सकता है।

लहरों से गतिमय होता जीवनचक्र

महासागरों में जीवन की विविधता में महासागरीय धाराओं का योगदान अहम् है। जल के ऊपर या नीचे उठने के कारण विभिन्न पोषक तत्व एक स्थान से दूसरे स्थान तक वितरित होते रहते हैं जिसके परिणामस्वरूप समुद्र में जीवन चलता रहता है।

समुद्र की ऊपरी परत जीवन के लिए सबसे उत्पादक क्षेत्र है। इसी क्षेत्र में सूर्य की रोशनी के सहयोग से

जीवन के रंग–बिरंगे रूपों से भरपूर महासागर

पानी के खनिजों से पादप प्लवकों द्वारा कार्बनिक पदार्थों का निर्माण होता है जो खाद्य शृंखला की पहली कड़ी होते हैं। मौटे तौर पर महासागरों का जल दो पर्तों में बाँटा जा सकता है। महासागर की ऊपरी पर्त का आयतन समस्त महासागरीय जल का लगभग दो प्रतिशत होता है। सूर्य के ताप और हवाओं के प्रभाव वाली यह पर्त विभिन्न महासागरीय गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका रखती है। ऊपरी पर्त से पानी भाप बन कर पूरी पृथ्वी पर मीठे पानी के रूप में बरसता है। ये पानी जमीन पर जीवन का पोषण करते हुए नदियों–नालों के रूप में पुनः महासागरों में आ मिलता है और अपने साथ लाता है कई प्रकार के खनिज व लवण। महासागरों की लवणता लाखों वर्षों की इसी प्रक्रिया का ही परिणाम है। वैसे समुद्री ज्वालामुखी जैसी गतिविधियाँ भी समुद्री लवणता में अपना योगदान देती हैं। अतः समुद्र में आपस में अंतःसबंधित कई प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप नमक व अन्य खनिजों का सन्तुलन बना रहता है और जिससे समुद्र में जीवन निरन्तर चलता रहता है। इस पर्त की तुलना में निचली पर्त जो अधिकतर महासागरीय जल को रखती है, उसमें प्रायः तापमान नियत बना रहता है। निचली पर्त का तापमान – 1 (शून्य से एक डिग्री नीचे) से लेकर 5 डिग्री सेल्सियस के आसपास होता है। एक अनुमान के अनुसार निचली पर्त के पानी के एक परमाणु को ऊपरी पर्त तक पहुँचने के लिए लगभग 1000 साल का इंतजार करना पड़ता है। इस पानी का उद्‌गम ध्रुवीय प्रदेशों में उपस्थित ऊपरी पर्त का पानी है जो कम तापमान के कारण अधिक घनत्व का होता है। इस पानी की लवणता भी स्थिर होती है। समुद्र की ऊपरी पर्त व निचली पर्त के बीचों–बीच एक और क्षेत्र होता है जो ऊपरी क्षेत्र और निचले क्षेत्र के पानी के लिए एक अवरोधक का कार्य कर उन्हें आपस में मिलने से रोकता है। इस मध्य क्षेत्र में तापमान गहराई की ओर बहुत तेजी से कम होता जाता है और हम जानते हैं कि ठंडे पानी का घनत्व गर्म पानी की अपेक्षा अधिक होता है। परिणामस्वरूप बीच का यह क्षेत्र ऊपरी पर्त के गर्म पानी व निचली पर्त के ठंडे पानी को आपस में मिलने से रोकता है।

समुद्रों में पनपता जीवन

विशिष्ट स्थलाकृति व समुद्री जल के विशेष गुणों के कारण समुद्र में पृथ्वी की अपेक्षा अधिक संख्या में जीव–जन्तु मिलते हैं अर्थात समुद्र भी जैवविविधता का अथाह भंडार है। समुद्र में यद्यपि जीवों का घनत्व पृथ्वी की तुलना में अलग हो सकता है लेकिन समुद्र के तल और सतह यानि सभी स्थानों पर जीव–जन्तु पाए जाते हैं। इसके अलावा समुद्र में जीवों की विशेषताएं पृथ्वी की तुलना में बहुत अधिक हैं। समुद्र में जीवन को तीन

विभिन्न बायोम क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है। समुद्र में ऊपरी पर्त यानि सतह से 200 मीटर तक सूर्य के ताप और हवाओं के प्रभाव के कारण जीवन अधिक पाया जा सकता है। यह क्षेत्र कार्बन को सूर्य की रोशनी में जैविक पदार्थों में बदलने के हिसाब से सबसे अधिक उत्पादक क्षेत्र है। इस क्षेत्र के जीव सूर्य के प्रकाश का उपयोग कर अपने लिए भोजन स्वयं बना लेते हैं। कई लोग समुद्र के इस क्षेत्र की तुलना उत्पादन के स्तर पर जमीनी वर्षावनों से करते है। 200 मीटर से अधिक गहराई वाले क्षेत्र में जीवन की मात्रा ऊपरी पर्त की तुलना में कम होती है। समुद्री क्षेत्र में जीवन का सबसे दिलचस्प पहलू महासागरों की गहराई में स्थित जीवन से जुड़ा है। वास्तव में यह आश्चर्य का विषय है कि इतनी गहराई में भी जीवन विविध रूपों में मिलता है। इस क्षेत्र के जीवों के पोषण में ऊपरी क्षेत्र में रहने वाले जीवों का योगदान होता है। समुद्र की ऊपरी पर्त में रहने वाले जीवों के मृत अवशेष गहराई में स्थित जीवों के लिए पोषक तत्वों की वर्षा के रूप में गिरते रहते हैं जिसके परिणामस्वरूप गहराई में रहने वाले जीवों का जीवन चक्र निरन्तर चलता रहता है। यहाँ न तो सूर्य का प्रकाश पहुंचता है और यहाँ पादप प्लवक जैसे प्राथमिक उत्पादक जीव भी अनुपस्थित होते हैं। यानि यहाँ एक पूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र का अभाव है परन्तु फिर भी यहाँ जीवन पाया जाता है। समुद्र की अथाह गहराई में जीवन को फलते–फूलते देखना हैरानी की बात है। परन्तु यहाँ खाद्य श्रृंखला की शुरुआत ऐसे जीवाणुओं से होती है जो पानी में घुले रसायनों से ऊर्जा प्राप्त कर प्राथमिक उत्पादक की भूमिका निभाते है। यहाँ टयूब वार्म व श्रिम्प जैसे जीव–जन्तु पाए जाते हैं। समुद्र की गहराई में जहाँ प्रकाश नहीं पहुंचता वहाँ जीवन चलाने के लिए कुछ जीवों द्वारा एक वैकल्पिक प्रणाली विकसित कर ली गई है जिसके कारण यह क्षेत्र जीवन के बहुरंगी रंगों से सरोबार होता है।

समुद्र में जीव न केवल आगे और पीछे वरन् ऊपर और नीचे भी गति कर सकते हैं। समुद्र में तीन प्रकार के जीव मिलते हैं – एक तो वो जो तैरते रहते हैं और दूसरे वो जो पानी में डोलते रहते हैं। तैरने वाले जीवों को तरणक और जल में डोलने वाले जीवों को प्लवक या प्लैंक्टन एवं समुद्र के तल पर या उसके पास रहने वाले जीवों को नितलीय जीव कहते हैं। तरणक और प्लवक जीवों में विभेद करना आसान नहीं है। उदाहरण के लिए मछलियों के बच्चे प्लवक होते हैं और बड़े होकर तरणक बन जाते है। प्रायः तरणक और प्लवक जीव खुले समुद्र में रहते हैं। नितलीय और तरणक जीव अपेक्षाकृत बड़े आकार के होते हैं। समुद्री जीवों में प्लवक श्रेणी के जीवों की बहुलता होती है। हाँ, विकास के क्रम में पहले जीव समुद्र से धरती पर आए और पुनः समुद्र में ही लौट गए। सील, व्हेल, और वालरस जैसे स्तनधारी जीव इसी का उदाहरण है परन्तु समुद्री जीव होने के बाद भी आज भी जीवन की कुछ प्रक्रियाओं को पूरा करने के लिए इन जीवों को समुद्र के किनारों पर ही लौटना पड़ता है।

पृथ्वी ग्रह को अन्य ग्रहों से जो पदार्थ अलग करता है वह है समुद्रों का पानी, जिसने उसकी 70 प्रतिशत सतह को ढक रखा है। यदि पृथ्वी की सतह हर जगह समतल होती तो पूरी पृथ्वी पर समुद्र की गहराई 2500 मीटर होती। समुद्र पृथ्वी पर जीवन के प्रतीक हैं। समुद्र में ही जीवन की शुरुआत हुई और आज भी वहाँ जैवविविधता की अधिकता है। समुद्र सूक्ष्म जीव से लेकर विशालकाय जीव ब्लू व्हेल का निवास स्थान है। जीवन की विविधता को संजोए हुए समुद्र पृथ्वी के मौसम को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण तंत्र है। पृथ्वी पर ऊर्जा का संचरण एक स्थान से दूसरे स्थान तक करने में समुद्रों की अहम् भूमिका है। समुद्र को पृथ्वी का ऊष्मागृह और कार्बन डाइऑक्साइड गैस का भंडारगृह भी कहा जाता है।

समुद्र और प्राकृतिक संसाधन

समुद्र में उपलब्ध संसाधनों को मुख्य रूप से चार भागों में रखा जाता है। पहले वर्ग में वे खाद्य पदार्थ हैं जो मानवों को खाने या पशुओं के चारे के रूप में समुद्र से उपलब्ध हो सकते हैं। दूसरे वर्ग में नमक सहित कई अन्य रसायन हैं। तीसरे वर्ग में समुद्री जल से प्राप्त होने

वाले पदार्थ और पैट्रोलियम व कई अन्य रसायन शामिल हैं। चौथे वर्ग में समुद्र में उठने वाले ज्वार–भाटे व लहरों से प्राप्त ज्वारीय ऊर्जा एवं समुद्र में लवणता के अन्तर से प्राप्त होने वाली ऊर्जा शामिल है।

समुद्र प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थों का असीम स्रोत है। समुद्र में उपलब्ध शैवाल (काई) भी एक महत्वपूर्ण खाद्य स्रोत है। कुछ प्रकार के शैवालों में आयोडिन उपस्थित होता है। कुछ शैवालों का उपयोग उद्योगों में भी किया जा सकता है। समुद्री जल अत्यंत समृद्ध संसाधनों में से एक है। समुद्री जल से औद्योगिक उपयोग के सैंकड़ों तत्व निकाले जा सकते हैं। काँच, साबुन और कागज बनाने के काम में आने वाले गूदे के लिए सोडियम सल्फेट का उपयोग किया जाता है, जिसे बहुत अधिक मात्रा में समुद्र के जल से निकाला जाता है। प्रतिवर्ष भारत में समुद्री जल से नमक निकालने के बाद बचे हुए भाग में से लगभग हजारों टन मैग्नीशियम सल्फेट एवं पोटेशियम सल्फेट और ब्रोमीन निकाला जा सकता है। तात्पर्य यह कि समुद्री जल के संबंध में "आम के आम और गुठलियों के भी दाम" वाली कहावत सटीक बैठती है। समुद्र के तल पर छोट–छोटे गोले के रूप में मैंग्नीज, लोहा, तांबा, कोबाल्ट व निकल जैसे अन्य खनिज पड़े होते हैं। वर्तमान में विश्व के कुछ देश समुद्र की अथाह खनिज संपदा के दोहन के लिए सरल व सुविधाजनक तकनीक के विकास में कार्यरत हैं।

महासागर नमक का विशाल स्रोत है। नमक के अलावा महासागरों से सैंकड़ों तत्व मिलते हैं। समुद्री जल में मिलने वाले कुछ प्रमुख पदार्थों में मैग्नीशियम, सल्फर, पोटेशियम, ब्रोमाइड व कार्बन हैं और समुद्री जल में सोना भी मिलता है लेकिन बहुत ही नगण्य मात्रा में। समुद्री जल में घुले हुए या उसमें तैरते हुए तत्वों के अतिरिक्त कई गैसें भी पाई जाती हैं। जल में घुली हुई गैसों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण गैस ऑक्सीजन है। इस ऑक्सीजन का प्रयोग जल में रहने वाले अरबों पौधे और जीव साँस लेने के लिए करते हैं। ऑक्सीजन के अलावा नाइट्रोजन और कार्बन डाइऑक्साइड गैसें भी समुद्री जल में घुली रहती हैं। पानी में घुली कार्बन डाइऑक्साइड गैस समुद्री जीवों के काम आती है। पादप वर्ग प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड का उपयोग कर स्वयं के लिए व अन्य जीवों के लिए भोजन का निर्माण करता है।

भविष्य के ऊर्जा स्रोत

खनिज संपदा के अलावा समुद्र से असीमित ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। समुद्र से ऊर्जा प्राप्त करने के कई स्रोत हैं। समुद्र नवीकरणीय या गैर परंपरागत ऊर्जा का अच्छा स्रोत साबित हो सकता है। ज्वार–भाटे और लहरों में छिपी ऊर्जा को किसी प्रकार से यदि उपयोग में लाया जाए तो विश्व की समस्त ऊर्जा आवश्यकता पूरी हो सकती है। फ्रांस व रूस जैसे कुछ देशों में ज्वार–भाटे से बिजली पैदा की जा रही है। समुद्र में चलने वाली हवा और उसके जल की धाराओं की ऊर्जा का प्रयोग भी टर्बाइन चलाने और बिजली पैदा करने के लिए किया जा सकता है। कुछ वर्ष पूर्व से समुद्री जल में लवणता की विभिन्नता के आधार पर बिजली प्राप्ति की तकनीक विकसित की जा रही है। इसके अलावा जल की विभिन्न परतों में तापमान की भिन्नता के कारण समाहित ऊर्जा भविष्य में ऊर्जा का अच्छा स्रोत साबित हो सकती है।

भारत और समुद्र

भारत एक महत्वपूर्ण समुद्रीय राष्ट्र है। यद्यपि हमारे देश का क्षेत्रफल पृथ्वी के क्षेत्रफल की तुलना में केवल ढाई प्रतिशत है लेकिन संसार की कुल आबादी का लगभग पंद्रह प्रतिशत भारत में रहता है। इस कारण भारत के लिए समुद्र का अधिक महत्व होना चाहिए। भारत विशाल समुद्री तटरेखा रखता है जिसका आर्थिक व जैवविविधता की धरोहर के रूप में उचित उपयोग किया जा सकता है। मैन्ग्रोव जैसे लवणसह वनस्पति क्षेत्र और प्रवाल भित्ति जैसे समृद्ध जैवविविधता वाले क्षेत्र भारतीय समुद्रीय क्षेत्र की विशेषता है। भारतीय समुद्री क्षेत्र खनिज संपदा और जैवविविधता से समृद्ध होने के अलावा भारत की ऊर्जा आवश्यकता को भी पूरा कर

सकता है।

महासागरों को बढ़ता खतरा

वर्तमान में मानवीय गतिविधियों का प्रभाव समुद्रों पर भी दिखाई देने लगा है। महासागरों के तटीय क्षेत्रों में दिनोदिन प्रदूषण का स्तर बढ़ रहा है। जहां पहले तटीय क्षेत्र विशेष कर नदियों के मुहानों पर सूर्य के प्रकाश की पर्याप्ता के कारण अधिक जैवविविधता वाले क्षेत्रों के रूप में पहचाने जाते थे, वहीं अब इन क्षेत्रों के समुद्री जल में भारी मात्रा में प्रदूषणकारी तत्वों के मिलने से वहाँ पनपने वाला जीवन संकट में हैं। तेलवाहक जहाजों से तेल के रिसाव के कारण एवं समुद्री जल के मटमैला होने पर उसमें सूर्य का प्रकाश गहराई तक नहीं पहुँच पाता, जिससे वहाँ जीवन को पनपने में परेशानी होती है और उन स्थानों पर जैवविविधता भी प्रभावित होती है। तेल के रिसाव से समुद्री क्षेत्र में जीवनदायी गैसों की उपस्थिति कम हो जाती है। जिससे वहां उपस्थित जीवन के विभिन्न रूपों पर संकट का साया मंडराने लगता है।

तेल प्रदूषण एक गंभीर समस्या

यदि किसी कारणवश पृथ्वी का तापमान बढ़ता है तो महासागरों की कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करने की क्षमता में कमी आएगी जिससे वायुमण्डल में गैसों की आनुपातिक मात्रा में परिवर्तन होगा और तब जीवन के लिए आवश्यक परिस्थितियों में असंतुलन होने से पृथ्वी पर जीवन संकट में पड़ सकता है। समुद्रों से तेल व खनिज के अनियंत्रित व अव्यवस्थित खनन एवं अन्य औद्योगिक कार्यों से समुद्री पारितंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। पर्यावरण सरंक्षण के लिए प्रतिबद्ध संस्था अंतर–सरकारी पैनल (इंटर गवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज, आईपीसीसी) द्वारा कुछ वर्श पूर्व जारी रिपोर्ट के अनुसार मानवीय गतिविधियों से ग्लोबल वार्मिंग के कारण समुद्री जल स्तर में वृद्धि हो रही है और जिसके परिणामस्वरूप विश्व भर के मौसम में बदलाव हो सकते हैं।

आओ संवारे महासागरों को

पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति महासागरों में ही हुई और आज भी महासागर जीवन के लिए आवश्यक परिस्थितियों को बनाए रखने में सहायक हैं। महासागर पृथ्वी के तिहाई से अधिक क्षेत्र में फैले हैं इसलिए महासागरीय पारितंत्र में थोड़ा सा परिवर्तन पृथ्वी के समूचे तंत्र को अव्यवस्थित करने की सामर्थ्य रखता है। हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि विश्व की लगभग 21 प्रतिशत आबादी महासागरों से लगे 30 किलोमीटर के तटीय क्षेत्र में निवास करती है इसलिए अन्य जीवों के साथ–साथ मानव समाज के लिए भी प्रदूषण मुक्त महासागर कल्याणकारी साबित होंगे। इसके अलावा पृथ्वी पर जीवन को बनाए रखने वाले पारितंत्रों में समुद्र की उपयोगिता को देखते हुए यह आवश्यक है कि हम समुद्री पारितंत्र के संतुलन को बनाए रखें ताकि पृथ्वी पर जीवन की ज्योत जलती रहे।

संदर्भ:

1 पृथ्वी ग्रह एक झरोखा, बिमान बसु, विज्ञान प्रसार

2. विपनेट पत्रिका, अंक मार्च 2008, विज्ञान प्रसार

3. पर्यावरण पत्रिका, जैव विविधता विशेशांक, 2010

4. भारत 2010, प्रकाशन विभाग

आधुनिक भारत में लौह एवं इस्पात उद्योग

❐ डॉ सुरेश चंद्र भाटिया

ऐसा माना जाता है कि आधुनिक लौह एवं इस्पात उत्पादन प्रक्रिया का विकास, अनेक पश्चिमी विकसित देशों में, औद्योगिक क्रांति के साथ-साथ, बीसवीं सदी के आरंभ से ही हुआ था। परन्तु भारत को 19वीं सदी से भी बहुत पहले विश्व का सर्वप्रथम लौह एवं इस्पात उत्पादक देश होने का गौरव प्राप्त है।

आधुनिक युग में लौह एवं इस्पात का न केवल उत्पादन, बल्कि उसकी खपत को भी, किसी राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि और राष्ट्रीय प्रगति का मूल्यांकन करने हेतु सर्वोत्तम मापदंड माना जा सकता है। लौह एवं इस्पात के उत्पादन ने राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रों में निर्माण उद्योग, उत्पादन वृद्धि, औद्योगीकरण, कृषि उपकरण निर्माण, भवन निर्माण, मूल संरचनात्मक निर्माण, व्यवसाय, आदि को एक ऐसा मजबूत आधार प्रदान किया, जिससे राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में, प्रगति के विभिन्न क्षेत्रों में, मेरुदण्ड के समान सुदृढ़ता प्राप्त की जा सकी।

आज हमारे दैनिक जीवन में प्रत्येक क्षेत्र में लोहा एवं इस्पात एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। एक ओर जहां छोटी से छोटी सुई बनाने के लिए विशिष्ट कोटि के इस्पात की आवश्यकता पड़ती है, वहीं दूसरी ओर बड़ी से बड़ी मशीनों एवं मूल-संरचनात्मक निर्माण कार्यों आदि सभी में लोहे व इस्पात का बहुतायत से प्रयोग हो रहा है।

सृजन के साथ-साथ आयुध सामग्री के निर्माण में भी लोहा एवं इस्पात उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम हैं। आदिकाल से आज तक, प्रागैतिहासिक काल से आधुनिक काल तक, विभिन्न अस्त्र–शस्त्रों के निर्माण में, लोहे व इस्पात का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्राचीन काल में ढाल, तलवार, गदा, कवच, फरसे आदि बनाने के लिए और आधुनिक काल में बन्दूक, पिस्तौल, मशीनगन, तोप, टैंक, बम आदि अनेक आयुध अस्त्रों के निर्माण और उनकी सक्रियता में लोहे व इस्पात का उपयोग बहुतायत से किया जाता है।

संभवतः भारत में बाहर से आने वाले विदेशियों द्वारा सबसे पहले सन् 1830 में तमिलनाडु में पोर्ट नोवो में लोहे की गलाई का काम आरंभ किया गया था। इसके बाद उत्तर भारत में कुमायूँ क्षेत्र में, मध्य प्रदेश में इन्दौर में तथा सन् 1874 में पश्चिम बंगाल में बराकर में लौह एवं धातुकर्म के छोटे–छोटे उद्योग स्थापित किये गये।

इनमें से अब केवल सन् 1874 में पश्चिम बंगाल में बराकर में स्थापित इस्पात कारखाना ही समय की मार से जीवित बचा रहा, जिसे सन् 1889 में बंगाल आयरन एण्ड स्टील कम्पनी में मिलाकर इसका विस्तार किया गया। इस कारखाने में केवल तीन छोटी–छोटी बहुत कम क्षमता वाली धमन भट्टियों की स्थापना की गई। जिनमें केवल कच्चे लोहे-पिग आयरन का वार्षिक उत्पादन केवल 25,000 टन प्रतिवर्ष तक ही सीमित था।

भारत में सन् 1870 में बंगाल आयरन वर्क्स द्वारा बंगाल–बिहार सीमा पर कुल्टी में सर्वप्रथम ''ओपन टॉप धमन भट्टी'' की स्थापना की गई, जहाँ तत्कालीन उन्नत तकनीकी का प्रयोग करके सन् 1875 से कच्चे लोहे का उत्पादन आरंभ हुआ। इस्पात उत्पादन के लिए भी कुल्टी में ही सर्वप्रथम छोटे आकार की ''ओपन हर्थ फर्नेस'' की स्थापना की गई, जहां सन् 1905 में इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ। लौह एवं इस्पात उत्पादन की इन छोटी–छोटी इकाइयों को बाद में बर्नपुर में स्थापित इंडियन आयरन इण्ड स्टील कम्पनी में विलय किया

❐ सुरेश चंद्र भाटिया, 284, सेक्टर–1, चिरंजीव विहार, गाजियाबाद–201002
सेवानिवृत मुख्य अभियंता– सेल, पूर्व अध्यक्ष, इंजीनियरिंग विज्ञान, 89वीं इंडियन साइंस कांग्रेस–2002

गया। जहां सन् 1922 से नियमित रूप से इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ।

सन् 1922 में बराकर के इस कारखाने को सम्मिलित करके आसनसोल में इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी 'इस्को' की स्थापना की गई। जिसने निकट ही हीरापुर में पिग आयरन का उत्पादन आरंभ किया। इस्को के इस कारखाने को बाद में बर्नपुर आयरन एण्ड स्टील वर्क्स के नाम से जाना गया। यहां सन् 1936 में इस्पात उत्पादन प्रक्रिया आरंभ की गई और सन् 1939 में इस्पात इन्गॉट की रोलिंग आरंभ हुई।

इस्को भी बाद में भारत सरकार के निर्देशानुसार स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया 'सेल' के अन्तर्गत आ गया और इसने सेल की नियमित इकाई के रूप में इस्पात उत्पादन आरंभ किया। अभी हाल ही में सेल की महत्वाकांक्षी इस्पात उत्पादन विस्तार परियोजना के अन्तर्गत, इस कारखाने की सभी पुरानी इकाइयों को पूर्णतया ध्वस्त करके, उनके स्थान पर नवीनतम तकनीकी प्रयोग करके, 2.5 मिलियन टन प्रति वर्ष इस्पात उत्पादन हेतु एक अत्याधुनिक इस्पात कारखाने की स्थापना करने का कार्य आरंभ किया गया।

आधुनिक लौह एवं इस्पात उद्योग

भारत में आधुनिक लौह एवं इस्पात उद्योग का सूत्रपात करने का श्रेय निःसंदेह जमशेदजी टाटा को जाता है, जिन्होंने सन् 1907 में बिहार में जमशेदपुर में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी ''टिस्को'' की स्थापना की। जमशेदपुर में भारत के द्वितीय एकीकृत इस्पात कारखाने टिस्को में 200 टन क्षमता की 2 धमन भट्टियां, 180 टन क्षमता की कोक ओवन बैटरी, 40 टन क्षमता की 4 ओपन हर्थ फर्नेस, भाप से परिचालित ब्लूमिंग मिल, एक छोटी बार मिल तथा अन्य तैयार इस्पात उत्पाद श्रेणियों के लिए एक रेल व स्ट्रक्चरल मिल की स्थापना की गई।

इस एकीकृत इस्पात कारखाने में केवल 1,20,000 टन कच्चे लोहे का उत्पादन करके उसे 80,000 टन इस्पात में परिवर्तित करने की क्षमता थी। टिस्को इस्पात संयंत्र में परिचालन प्रक्रिया प्रारंभ होने पर, सबसे पहला टन तप्त तरल इस्पात सन् 1911 में उत्पादित किया गया, जिसके बाद सन् 1912 से यहां नियमित रूप से इस्पात उत्पादन आरंभ हुआ।

इसके बाद सन् 1923 में भारत में तीसरा एकीकृत इस्पात कारखाना दक्षिण भारत में भद्रावती में भारत रत्न सर मोक्षगुण्डम् विश्वेश्वरैया के अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप एक अत्यन्त छोटी इकाई ''मैसूर आयरन स्टील एण्ड वुडवर्क्स'' की स्थापना की गई। इसके लिए भद्रावती के आस–पास के घने जंगलों से लकड़ी एकत्रित की जाने लगी। इस प्रकार एकत्रित की गई लकड़ी को वुड डिस्टिलेशन प्लान्ट में आग के भभके से जलाकर उसे कच्चे कोयले, चारकोल में परिवर्तित किया गया। जिसे लौह अयस्क खनिज के साथ भट्टी में डालकर इस्पात उत्पादन किया जाने लगा।

सन् 1936 में इसका विस्तार करके इसमें इस्पात उत्पादन हेतु इस्पात गलनशाला तथा रोलिंग मिल की स्थापना की गई। सर विश्वेश्वरैया ने भद्रावती के पास उपलब्ध लौह अयस्क के अपार भंडार और आस–पास के घने जंगलों से लकड़ी प्राप्त करके, उससे कच्चा कोयला बनाकर एवं स्थानीय लोगों को कारखाने में काम पर लगाकर, बहुत कम लागत पर इस्पात उत्पादन करने में सफलता प्राप्त की। दुर्भाग्यवश उन्हीं दिनों अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में लोहे की कीमत 100 रुपये प्रति टन से घटकर केवल 45 रुपये प्रति टन रह गई।

भारतीय इस्पात उद्योग के लिए यह सचमुच एक आश्चर्यजनक उपलब्धि कही जा सकती है कि उस समय सर विश्वश्वरैया ने भारत में बहुत ही कम लागत पर इस्पात उत्पादन करके, रेल व स्टीमर से उसे भारत से अमेरिका जैसे विकसित देश में ले जाकर, वहां के तटवर्ती क्षेत्रों में, वहां की उत्पादन लागत से भी कम कीमत पर इस्पात बेचने में सफलता प्राप्त की।

इस प्रकार सन् 1947 में भारतीय स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर भारत में निम्नलिखित तीन एकीकृत इस्पात

कारखाने परिचालित थेः

1. जमशेपुर में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी ''टिस्को''
2. बर्नपुर में इंडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी ''इस्को''
3. भद्रावती में ''मैसूर आयरन–स्टील एण्ड वुडवर्क्स''

यद्यपि उस समय भारत में परिचालित इन तीनों एकीकृत इस्पात कारखानों की सकल वार्षिक इस्पात क्षमता बहुत कम केवल 1.3 मिलियन टन प्रतिवर्ष तक ही सीमित थी, तथापि उस समय की परिस्थितियों के अनुसार इसे एक बड़ी उपलब्धि माना जा सकता है।

इस्पात उत्पादन एवं औद्योगिक नीति

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में लौह एवं इस्पात क्षेत्र के महत्व पर विशेष बल दिया गया। भारी औद्योगीकरण के अन्तर्गत इस्पात उद्योग के विस्तार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई, क्योंकि किसी भी अन्य औद्योगिक उत्पादन की अपेक्षा इस्पात उत्पादन ही औद्योगिक विकास की गति निश्चित करता है। इसके अतिरिक्त सन् 1956 के औद्योगिक नीति संकल्प के अनुसार इस्पात उद्योग के सर्वांगीण विकास का दायित्व भारत सरकार को सौंपा गया।

उत्पादन के आवश्यक उपकरणों एवं मशीनों के निर्माण हेतु भी आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए छठे व सातवें दशक में अनेक प्रमुख नीतिगत निर्णय किये गये। निर्यात की दृष्टि से निराशावादी प्रवृति के उस वातावरण में प्राथमिक एवं मूल उद्योगों में तेजी से निवेश करने का ही एकमात्र ऐसा विकल्प था जो विकास का मार्ग प्रशस्त करने के लिए अत्यन्त ही आवश्यक था।

भारी निवेश योजनाओं पर पूंजी लगाने के लिए घरेलू पूंजीगत बाजार की अनुपस्थिति तथा उद्योगों में निजी क्षेत्र में एकछत्र राज पर रोक आदि कुछ ऐसे कारण थे जिनसे भारत सरकार ने इस्पात क्षेत्र पर अपना कड़ा नियंत्रण बनाये रखा, जो पिछली सदी के दसवें दशक में उदारीकरण की प्रक्रिया आरंभ होने तक जारी रहा।

एकीकृत इस्पात उत्पादन इकाइयां

छठे दशक के आरंभ में इस्पात की मांग में वृद्धि के साथ–साथ भारत में स्थित इकाइयों की क्षमता में विस्तार के अतिरिक्त और अधिक उत्पादन के लिए, सार्वजनिक क्षेत्र में नये–नये इस्पात संयंत्र लगाने की आवश्यकता भी महसूस की गई।

उड़ीसा में राउरकेला में सपाट इस्पात 'फ्लैट स्टील' उत्पादन के लिए 1.0 मिलियन टन प्रतिवर्ष क्षमता के संयंत्र की स्थापना हेतु सन् 1953 में जर्मनी के कुरुप–डेमाग से, मध्य प्रदेश के भिलाई में रेल व स्ट्रक्चरल इस्पात उत्पादन के लिए 1.0 मिलियन टन प्रतिवर्ष क्षमता के संयंत्र की स्थापना हेतु तत्कालीन सोवियत संघ से तथा पश्चिम बंगाल में दुर्गापुर में विशिष्ट एलॉय स्टील तथा रेलवे लोको व्हील एण्ड एक्सल उत्पादन के लिए 1.0 मिलियन टन प्रतिवर्ष क्षमता के संयंत्र की स्थापना हेतु ब्रिटेन से समझौता किया गया।

उपर्युक्त समझौतों के फलस्वरूप सातवें दशक के आरंभ में राउरकेला, भिलाई एवं दुर्गापुर में एक–एक मिलियन टन वार्षिक उत्पादन क्षमता के तीन इस्पात संयंत्र एक साथ अस्तित्व में आये। उस समय एक साथ तीन–तीन संयंत्रों की स्थापना किसी अविकसित राष्ट्र, यहां तक कि किसी विकसित राष्ट्र, के लिए भी एक विशिष्ट उपलब्धि का द्योतक कहा जा सकता है।

वर्तमान समय में भारत में कुल मिलाकर 104 लाख टन वार्षिक इस्पात उत्पादन क्षमता विद्युत आर्क फर्नेस क्षेत्र में है। परन्तु इनकी सकल क्षमता उपयोग पर बढ़ी हुई निवेश लागत, बढ़ी हुई बिजली दरें एवं पुरानी तकनीकी का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। विद्युत आर्क फर्नेस प्रणाली के अन्तर्गत, लायड्स, जिंदल एवं एस्सार द्वारा आधुनिक तकनीकी वाली नई मिलें स्थापित की गई और आकार की दृष्टि से इनमें किफायती उत्पादन करने की संभावना भी है। परम्परागत रूप से एकीकृत इस्पात क्षेत्र के एकछत्र राज में नई इकाइयों के प्रवेश से सारे बाजार अंश में परिवर्तन आया है।

री–रोलिंग इकाइयाँ

सन् 1946 में 1,46,000 टन वार्षिक क्षमता के साथ देश में कुल 32 पंजीकृत री–रोलिंग इकाइयां थी। छठे दशक के अन्त में बार एवं रॉड की किल्लत से विवश होकर भारत सरकार ने री–रोलिंग इकाइयों का विकास किया। सन् 1966 में देश में 47 लाख टन वार्षिक क्षमता के साथ कुल 431 पंजीकृत री –रोलिंग इकाइयां थी। इस समय देश में 210 लाख टन वार्षिक क्षमता के साथ 1018 पंजीकृत री–रोलिंग इकाइयां कार्यरत हैं।

इस्पात क्षेत्र का अविरल विकास

इस्पात क्षेत्र में द्वितीय व तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं में उच्च विकास दर कायम रही। छठे व सातवें दशक में यह विकास दर क्रमशः 9 एवं 6 प्रतिशत रही। परन्तु आठवें एवं नवें दशक में यह विकास दर गिरकर क्रमशः 4–5 प्रतिशत ही रह गई। अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के बाद विकास दर में पुनः भारी वृद्धि आई और सन् 1990–91 से 1995–96 के मध्य औसतन विकास दर 7.6 प्रतिशत रही।

भारतीय इस्पात उद्योग ने बीसवीं सदी में सन् 1907 से तथा स्वतंत्र भारत में सन् 1947 से, अपनी मामूली सी स्थिति से शुरूआत करके, आज स्वतंत्रता के बाद 60 वर्षों में भारत की अर्थव्यवस्था में एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान अर्जित कर लिया है। इंटरनेशनल आयरन एण्ड स्टील इंस्टिट्यूट के अनुसार, भारत सन् 2006 में अपने 49.45 मिलियन टन सकल इस्पात उत्पादन के बल पर दक्षिण कोरिया को पीछे छोड़कर विश्व में पांचवां सबसे बड़ा इस्पात उत्पादक देश बन गया। अब सन् 2008–09 में अपने 66.4 मिलियन टन तथा सन् 2009–10 में 72.8 मिलियन टन सकल इस्पात उत्पादन के बल पर अमेरिका व रूस को पीछे छोड़कर चीन (प्रथम) व जापान (द्वितीय) के बाद विश्व में तीसरा सबसे बड़ा इस्पात उत्पादक देश बन गया है। इसी वर्ष समूचे विश्व में 1350 मिलियन टन इस्पात का उत्पादन किया गया।

वित्तीय वर्ष 2006–07 में भारत में 18.35 मिलियन टन स्पंज का उत्पादन भी किया गया जो पिछले वर्ष की तुलना में 24 प्रतिशत अधिक रहा। इस वर्ष भी भारत विश्व में स्पंज आयरन का सबसे बड़ा उत्पादन देश बना रहा।

भारत में जहां सन् 1948 में तैयार इस्पात की आपूर्ति लगभग 8.60 लाख टन ही थी, वहीं सन् 1997 में बढ़कर लगभग 23 मिलियन टन, सन् 2006 में बढ़कर 49.95 मिलियन टन तथा सन् 2010 में बढ़कर 66.4 मिलियन टन के स्तर पर पहुंच गई।

भारत के सकल घरेलू उत्पाद– ग्रॉस डोमेस्टिक प्रोडक्ट– में इस्पात उत्पादन की भागीदारी का अंश लगभग 2 प्रतिशत तथा विनिर्माता क्षेत्र के कुल उत्पादन का लगभग 12 प्रतिशत है। थोक मूल्य सूचकांक में इस्पात का योगदान 4.0 प्रतिशत है। कच्चे माल और तैयार इस्पात की ढुलाई के बल पर भारतीय रेलवे के लिए राजस्व अर्जन करने में इस्पात उद्योग का सबसे बड़ा योगदान अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है।

भारतीय औद्योगिक विकास में आशा के अनुरूप प्रगति होने पर तैयार गुणवत्तायुक्त इस्पात की वास्तविक अन्तर्निहित बाजार मांग असाधारण रूप से बहुत अधिक हो सकती है। सन् 1955 से 1990 के मध्य भारत में इस्पात की खपत दर 5 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष, सन् 2006 में 30 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष तक पहुँच कर यह सन् 2009 में 40 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष के स्तर पर पहुंची है। इस्पात उद्योग के क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि के साथ–साथ यह भी आवश्यक होगा कि इस्पात की खपत दर को वर्तमान 40 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष से बढ़कार कम से कम 75–90 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष करने के तीव्र प्रयास किये जायें।

यद्यपि भारत में तैयार इस्पात की वर्तमान खपत दर 40 किलोग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिवर्ष हो गई है तथापि यह विश्व की वर्तमान औसत खपत दर 198 किलोग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष से बहुत कम है। इसकी तुलना में ब्राजील में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष खपत 100 किलोग्राम और चीन में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष खपत 250 किलोग्राम के स्तर तक पहुंच चुकी है।

भारत में इस समय तैयार इस्पात की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष 90 प्रतिशत खपत केवल 15 प्रतिशत व्यक्तियों द्वारा ही की जा रही है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में तो इस्पात की वर्तमान खपत दर केवल 2 प्रतिशत ही आंकी गई है। बाकी बचे लगभग 85 प्रतिशत व्यक्तियों के एक भाग को इस्पात खपत के अतिरिक्त दायरे में लाने से ही इस्पात की खपत दर में आशाजनक वृद्धि होने की संभावना है।

इस्पात की घरेलू खपत दर में वृद्धि के उपाय करने के साथ–साथ तैयार इस्पात के निर्यात में वृद्धि की भी असीम संभावनाएँ हैं। इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि **हम नवीन तकनीकी प्रयोग करके अन्तर्राष्ट्रीय मानक स्तर की उच्च गुणवत्तायुक्त श्रेणियों का उत्पादन सुनिश्चित करें।**

नवीन उत्पादन तकनीकी के उपयोग एवं अनुसंधान और विकास के फलस्वरूप भारतीय इस्पात उद्योग द्वारा विशिष्ट श्रेणियों के इस्पात उत्पादन में यथासंभव आत्मनिर्भरता प्राप्त की जा सकती है:

तालिका 1

भारत में वर्तमान प्रमुख इस्पात उत्पादन इकाइयाँ

क्र.सं.	इस्पात उत्पादन इकाइयाँ	वर्तमान उत्पादन क्षमता मिलियन टन प्रतिवर्ष
1.	सेल–बोकारो इस्पात संयत्र	4.5
2.	सेल–भिलाई इस्पात संयत्र	4.0
3.	सेल–राउरकेला इस्पात संयत्र	1.9
4.	सेल–दुर्गापुर इस्पात संयत्र	1.8
5.	सेल–बर्नपुर इस्पात संयत्र	–
6.	सेल–एलॉय इस्पात संयत्र	1.0
7.	सेल–सेलम इस्पात संयत्र	0.1
8.	सेल–विश्वेश्वरैया इस्पात संयत्र, भद्रावती	0.2
9.	सेल–महाराष्ट्र इलेक्ट्रोस्मेल्ट, चन्द्रपुर	0.1
10.	सेल–मालविका स्टील, जगदीशपुर	0.5
11.	टाटा स्टील, जमशेदपुर	7.2
12.	राष्ट्रीय इस्पात निगम, विशाखापट्टणम	2.9
13.	जिन्दल स्टील वर्क्स– इस्पात स्टील	14.3
14.	जिन्दल स्टील एण्ड पावर	3.0
15.	एस्सार स्टील	5.0
16.	लॉयड स्टील	0.5
17.	भूषण पावर एण्ड स्टील	1.2
18.	भूषण स्टील, गाजियाबाद	0.8
19.	अन्य एवं सेकण्डरी इकाइयाँ	31.0
	वर्तमान सकल इस्पात उत्पादन	80.0

तालिका 2

भारत में दिसम्बर 2012 तक इस्पात में प्रस्तावित निवेश एवं उत्पादन क्षमता कच्चे इस्पात की उत्पादन क्षमता (मिलियन टन प्रतिवर्ष)

क्र.सं	निवेश संस्था	वर्तमान इस्पात उत्पादन क्षमता	दिसम्बर 2012 तक इस्पात उत्पादन क्षमता		
			ब्राउनफील्ड विस्तार	ग्रीनफील्ड विस्तार	सकल अनुमानित
1.	स्टील अथॉरिटी	16.0	8.56	–	24.56
2.	राष्ट्रीय इस्पात	2.9	3.4	–	6.3
3.	टाटा स्टील	7.2	3.2	3.0	13.4
4.	एस्सार स्टील	5.0	3.9	6.0	14.9
5.	जेएसडब्लू इस्पात	14.3	4.4	–	18.7
6.	जेएसपीएल	3.0	4.8	3.25	10.33
7.	पॉस्को इंडिया	–	–	–	–
8.	आर्सेलर मित्तल	–	–	–	–
9.	नेशनल मिनरल	–	–	–	–
10.	भूषण पावर एण्ड स्टील	1.2	1.6	–	2.8
11.	भूषण स्टील	0.8	2.2	–	3.0
12.	अन्य व सेकंडरी	31.0	3.2	–	34.2
	सकल उत्पादन	79.24	33.93	12.25	125.22

तालिका 3

भारत एवं विश्व में तुलनात्मक इस्पात उत्पादन के आँकड़ (मिलियन टन)

वर्ष	भारत	विश्व
2004	32.6	1069.0
2005	45.8	1146.7
2006	49.45	1251.2
2007	53.1	1351.3
2008	57.8	1329.1
2009	56.6	1219.7
1010 (अगस्त तक)	44.57	931.98

स्रोतः worldsteel.com

तालिका 4

भारत में इस्पात उत्पादन की विकसित की गईं विशिष्ट श्रेणियाँ

क्रम सं.	इस्पात उत्पादन की विकसित की गई विशिष्ट श्रेणी
1.	हॉट रोल्ड नैरो प्लेट एवं शीट
2.	कोल्ड रोल्ट शीट
3.	गैल्वेनाइज्ड एवं कॉर्रुगेटेड शीट
4.	टिन मिल ब्लैक प्लेट
5.	अधिक लम्बी रेल पॉतें
6.	हैवी स्ट्रक्चरल इस्पात
7.	मर्चेन्ट इस्पात
8.	तेल व गैस परिवहन हेतु इस्पात पाइप
9.	स्पाइरल वैल्डेड पाइप
10.	आर्मर्ड प्लेट– विजयन्त, अर्जुन व अजय टैंकों के लिए
11.	स्पैड प्लेट– मुख्य युद्धक टैंक निर्माण के लिए
12.	जैकाल प्लेट– सहायक युद्धक टैंक निर्माण के लिए
13.	सेल कवच स्टील– सुरक्षा कवच, सुरक्षा वाहन, भारी टैक्टर ट्रॉली हेतु
14.	टार्जेट स्टील– गोला बारूद की क्षमता मापने के लिए
15.	कार्टेज केस स्टील– मुख्य युद्धक टैंकों के बुलेट निर्माण के लिए
16.	सेल सागर– नेवी, लड़ाकू युद्ध पोट, जलपोत, पनडुब्बी के लिए
17.	एडमिरल प्लेट– एस एल वी परियोजना के लिए
18.	मैराजिंग प्लेट– लिएण्डर फ्रिगेट, युद्धपोत निर्माण के लिए
19.	आईएससीडीवी 6 प्लेट– जीएसएलवी परियोजना के लिए
20.	विशिष्ट इस्पात– फास्ट ब्रीड एटॉमिक रिएक्टर के लिए
21.	इलेक्ट्रोनिक टिन प्लेट
22.	सिलिकॉन स्टील शीट– विद्युत उपकरण निर्माण हेतु
23.	स्टील स्लीपर, फिश प्लेट– रेलवे लाईनों के लिए
24.	व्हील एण्ड एक्सल– रेलवे लोकोमोटिव में प्रयोग करने हेतु
25.	एलॉय कन्सट्रक्शन स्टील
26.	कार्बन कन्सट्रक्शन स्टील
27.	स्प्रिंग स्टील– उच्च क्षमता स्प्रिंग निर्माण के लिए
28.	बॉल बियरिंग स्टील– अधिक गतिशील मशीन परिचालन के लिए
29.	स्टेनलेस स्टील– घरेलू एवं अन्य अनेक विशिष्ट उपयोग
30.	सर्जिकल स्टील– शल्यक्रिया एवं अन्य उपचार उपकरणों के लिए

चित्र 1: भारत में प्रमुख एकीकृत इस्पात संयंत्र– उत्पादन एवं वितरण तंत्र

❐

Your Responsibility as an NIOS Learner

❐ Dr. Rajesh Kumar

You are now a student of the National Institute of Open Schooling (NIOS) and we welcome you in your pursuit of learning. We would like to discuss with you a few things so that you are not bewildered and are able to take maximum benefit of your situation.

I hope by now you know something about the NIOS, or an open school, or open learning. If you do not know anything about it, please read the Prospectus you received at the time of your admission which is also available on the NIOS website (http://www.nios.ac.in).

The Prospectus also gives you information about rules and regulations which will guide your study in NIOS. So, this is an important document that you should preserve for time to time reference.

You may briefly understand that the education system in which you were studying or had studied earlier was one system (normally called formal educaiton system) and this system that you have now selected for your study is open system of education.

In that sense, you are an open learner as you are in an open system of education. And this puts you in a very different situation than the one in which you have studied earlier, when you were attending a regular or formal school. It is better to understand the difference between an open learner and a formal learner as these concepts would give you an insight about your responsibility in this system of learning. Let us have a look at these:

Table 1: Differences between a formal school learner and an open school learner

The formal school learner	*The open school learner*
has to go to school on regular basis	is free to manage his/her time
has a support of a regular teacher	most of the time learns through self learning material
has support of peer group	can seek support from parents, colleagues, etc.
is a full time student	may be attending to other responsibilities
receives feedback through unit tests/other examinations	receives feedback through learning material etc.
has to study a set of subjects or a stream	is free to choose subjects of his/her choice
has to study all the subjects simultaneously	can study as many subjects he/she wishes to, and as per his/her speed and pace
has to take examination simultaneously in all the subjects	can choose to take examination in as many subjects as he/she wishes to, and even skip an examination
has to finish a course in the year	has one to five years to finish a course
can pursue co-curricular activities	has limited opportunities for such activities
has others to take decision for him/her	has to take his/her own decisions

❐ Dr. Rajesh Kumar, Regional Director, National Institute of Open Schooling, Regional Centre, YMCA Complex, Sector-11 C, Chandigarh – 160011, Email: rdchandigarh@nios.ac.in

Can you now identity the basic difference between a formal learner and an open learner, i.e., YOU? Yes, you are right. An open learner is much more independent compared to a formal learner. This suggests that you, as an open learner, have much more responsibility for your learning and its arrangement compared to a formal learner. There is no need to get frightened of your situation. Becoming independent is a very good thing in life, and in every sphere of our society of nation. The reason is that when you are independent, you are in full knowledge and command of your affairs, and also under no circumstance no one will stop you to seek help from possible sources. NIOS also arranges systematic help in your learning. Thus, as an open learner you would be doing most of the things on your own or yourself, and in that way you are also a self learner.

In the following lines, we shall be spelling out what is expected from you during your study in the NIOS so that you may reap maximum benefits of the system.

Tools and commitment you require

Before we proceed further, I would like to discuss with you what tools you should be equipped with. Some of these are:

1. You should be having an active email ID, as many times you will find that you are not able to get to the NIOS, or your study centre over the phone. At that time, you may use email effectively.
2. You should spare time for your study and go to your study centre.
3. You should understand that only organized study will help you in achieving your goals in NIOS, and no assurance from anyone, even after paying for it, will get you through your course of study.

Now we shall discuss the points you should take care of.

Check your Admission

NIOS would be posting information on the email ID you have provided about status of your admission. If there is any shortcoming, rectify that promptly so that your admission is not cancelled for any laxity on your part. If you are not getting confirmation for your admission in about two months time, it should raise alarm and you should get active to clear things.

Check your data

A soon as you receive your Identity Card, learning material etc., please check carefully that everything is in order. If you find any mistake in your data, e.g., wrong name, wrong subject, or you receive wrong materials or less material, then immediately get the things corrected, otherwise it will create problem at a later stage.

Dates to Remember

You must know and remember dates regarding various activities in NIOS. For example, submission of examination form and fee, change of subject, additional subject, etc. If you fail to act in time, you may miss your examination. All these dates are given at the back of your Prospectus, and at the NIOS website (www.nios.ac.in). You may paste it on the wall of your room where you study for easy reference.

The Learning Material

Since you are a self learner, the NIOS provides you self learning material which you need to follow for your course of study. These are not just any other books you have seen in your schools etc. These are called *teacher in print*, meaning as if all those things have been printed for you which

a teacher does in a classroom. There are a number of characteristics of this learning material which will help you learn your subjects. For example:

1. The learning materials are developed by a highly qualified team of experts in the area.
2. These follow a programme of learning which is based on proven theories of learning and takes care of needs of a self learner like you.
3. You will find that the content in the material has been presented in very small steps so that you may learn it easily.
4. Every step is followed by an objective type question, called Intext Question as it appears between the texts. This will help to know if you have learnt the step or section properly.
5. A lot of margin or white space has been left on each page where you would be able to write notes.
6. There are other components to help you with your learning, e.g., use of numbers, bullets, tables, boxes, graphics, maps, drawing, summary of the lesson, exercise, and suggestions for further learning.
7. You would also find support material in many subjects, such as glossaries and practical guides in subjects involving practical work.

Thus, an important aspect of your learning is that you will be learning on your own and will also be primarily learning through printed self learning material, although audio-video programmes will also be available in many subject areas to help you with your learning.

So, you should study thoroughly with the help of your learning material and make notes in the space provided on each page about the problems you have faced while learning and questions you have in your mind. You may also use this space to make notes which shall help you remember your learning at the time of examination etc.

Attend Personal Contact Programmes

NIOS organizes Personal Contact Programme (or classes as normally referred) to help you in your studies. However, you should note that these are not classes as you are normally familiar with and that is why we have named that Personal Contact Programmes (PCP). In the PCP, the teacher may not be able to teach you in a way it is done in a formal school. Rather, PCP's are meant for:

1. Helping you with your problems, questions, and queries.
2. Guide you for your studies.
3. Doing practicals in the subjects involving practical work.

So, the first and foremost advice to you is to attend the Personal Contact Programme. For that you should make notes of queries etc., and ask questions to your tutors (or teachers), and seek their advice to organize and further your studies. There are some others benefits too for going to your study centres, such as:

1. You would meet your peer group, and may like to form a study group with your neighbourhood students.
2. This will help you to have a discipline in your studies.
3. We have requested the study centres to provide you a study room on daily basis and you may utilize it.
4. You would have opportunity to learn from audio-video programmes.
5. You would not miss any important date to

deposit your exam fee etc., as the notices on the notice board at the study centre will remind you for this.

6. You may take part in co-curricular activities organized by the study centre.

Tutor Marked Assignments

Practice makes a person perfect, as the saying goes. You would be getting opportunities to practice your learning in your learning material and apart from that you would also be given three Tutor Marked Assignments (TMAs) to work with. The difference between your other practice and TMA is that your tutor (or teacher) at the study centre will be marking these to provide you feedback on your progress. This way both you and your tutor will be able to know your progress, your weak areas and your strengths. So, you must complete your assignments and submit them to your tutor at the study centre as per the schedule of dates for submission of TMA. Remember, submitting at least one assignment is mandatory to complete your course.

Don't Get Cheated

I would also like to give you an alert of caution. You should not pay anything to the study centre for any of the services provided by it to you, as the NIOS has already paid them for this. You need to pay for your admission fee only once at the time of admission, the examination fee, fee for change of subject, additional subject, duplicate certificate etc., as per the rates and schedule given in the Prospectus. All other things, like your learning material, I-Card, PCPs, TMAs and certificate are provided free of cost.

We wish you good luck for your successful studies, and please feel free to ask any query you have on the points disused in this article, or even otherwise.

❐

Learner's Responsibilities : At a Glance

- Do not fill up the Application Form for Admission without **careful reading of the instructions.**
- Do not leave any **column blank** in the Application Form for Admission.
- Do not submit Application Form for Admission without the **supporting documents**.
- Do not get influenced by **unauthorized agencies** who **falsely guarantee your success.**
- **Do not pay extra amount for admission and examination over and above the prescribed fee as mentioned in the Application Form for Admission to anyone.**
- Do not miss out the Personal Contact Programmes (PCPs) in each subject which all AIs have to provide on compulsory basis.
- **Do not indulge** in any **unfair means** such as copying, impersonation etc.
- Provide your valid E-mail ID and the mobile number for SMS alerts.

Most of the information about NIOS that you may need during the course of your studies is available on NIOS website.

Please log on at **www.nios.ac.in**

Whenever you communicate with NIOS Study Centre or concerned Regional Centre, please do not forget to mention your reference number, name, enrolment number and complete address.

An Endeavour to Save Biodiversity

❒ Dr. P.K. Mukherjee

The United Nations in its 83rd plenary meeting held on 20 December 2006 declared the year (2010) as the International Year of Biodiversity (IYB). This proclamation was made by the United Nations realising the economic, social, cultural and environmental importance of biodiversity. However, the main aim of the United Nations behind this proclamation was to underline the danger lurking on biodiversity so that by creating awareness in people, they may be motivated towards conservation of biodiversity. Therefore, the main purpose of the United Nations is to look for effective measures towards biodiversity conservation by popularising and promoting biodiversity at local, regional, national and international levels.

Many activities are being carried out the world over on the eve of IYB so that importance of biodiversity and its conservation can be brought home to common masses.

What is biodiversity?

As soon as someone mentions biodiversity, the question that immediately comes to the mind is what is biodiversity? In fact, various life forms e.g., animals, plants, microbes etc., are responsible for throbing of life on our planet Earth. These various life forms may collectively be called biodiversity.

Walter G. Rosen was the first to use the term biodiversity in 1985. Some conservative scientists like Thomas Lovejoy had advocated the use of the term' biological diversity'. Much before that the term 'natural diversity' was in use. However, somehow the term biodiversity seems to have universal appeal and is, therefore, more appropriate.

All the animals, plants, microbes etc., present on the Earth are part of biodiversity. Biodiversity can be seen everywhere-be it water, land, ocean, desert or mountain. All these different bodies or systems may collectively be called ecosystems.

Generally, identification (or classification) of biodiversity is done at three levels. Besides identification based on diverse ecosystems, identification within species and between species is also done.

Different species of animals are found in different ecosystems. For example, the animals found in deserts are different from those found in snow-clad mountains. Likewise, the animals found in seas and oceans are distinct from those found in jungles. Thus, depending on the ecosystem variation of biodiversity can be seen. This is called ecosystem biodiversity.

The identification of biodiversity among species is easy to understand. We have different animals belonging to different species, such as, elephant, lion or fox and different species of trees like teak, sandalwood or banyan tree or distinct fruit-bearing trees e.g., mango, banana or blue berry. All these are but examples of biodiversity between different species. This may be called species biodiversity.

❒ Dr. P.K. Mukherjee, Associate Professor of Physics, Res. 43, Deshbandhu Society, 15 Patparganj, Delhi-110092

Even within the same species variation may be there due to the difference in DNA. For instance, animals and plants belonging to the same species may look similar. However, they may be different genetically. Bananas or mangoes of different varieties provide apt examples of genetic biodiversity. Within humans also there may be great genetic variation. Therefore, humans also furnish examples of genetic biodiversity.

The classification of biodiversity enables us to formulate a broad definition of biodiversity. As per this definition, the diversity found in land, water and all ecosystems may be collectively called biodiversity. This definition includes diversity within species, between species as also of ecosystems.

So far only some million biological species have been identified on the Earth. The insects outnumber all other species. We have gathered information about a million insects on the earth while it is estimated that their number may be between 10 million and 30 million. Scientists have estimated that the total number of all biological species on Earth may be about a hundred million.

The scientists are busy looking for new and hitherto unknown species of animals and plants. However, some of the present animal and plant species are getting extinct or are now rare, thus endangering biodiversity.

There is no denying that conservation of biodiversity on the Earth is essential, for the foundation of life on the Earth is biodiversity. This has also been echoed by the United Nations in its slogan for IYB:

Biodiversity is life
Biodiversity is our life

Apart from this meaningful slogan the logo released by the United Nations on the occassion of IYB has, within boldly printed digits 2010, sketches of iconographic elements symbolising biodiversity. These include fish, waves, a felmingo, an adult and child, and a tree. A host of symbolic iconographic elements are included within this design to depict the scope of biodiversity, which includes marine, flora and fauna aspects. Together, they demonstrate how biodiversity is life and how we, as humans, are realising our place within this journey.

The Biodiversity of India

India is a country of rich biodiversity. It finds place amongst 17 megadiverse nations of the world. The total geographical area of our country is 32,87,263 square kilometres which is only about 2.4 per cent of the total global land area. Despite this, seven to eight per cent of the total global biodiversity is found in India.

A survey of around 70 per cent of our geographical area from the point of view of identification of biodiversity has been carried out. On the basis of this survey, we have been able to identify some 45,500 plant species and 91,000 animal species. Included amongst the animal species are 59,333 species of insects, 2,546 species of fish, 1,232 species of birds, 460 species of reptiles, 397 species of mammals and 240 species of amphibians. Amongst these, some species are native to India. They are called endemic species.

India is home to about 18.4 per cent of endemic animal species. So far as endemic plants species are concerned, according to specialists, India is next only to Australia in having the highest number of endemic plant species.

According to the data available till March 2009, the total protected area of India is 1,56,745 square kilometres which is 4.83 per cent of its total geographical area. Situated within this protected (reserved) area are 99 national parks, 523 wild

life sanctuaries, 15 biosphere reserves and many reserved forests.

There are two main centres of biodiversity in our country which are abundant in endemic species. They are called biodiversity hot spots. Twenty hot spots of the world have been reported so far. The Eastern Himalayas and Western Ghats are the two hot spots of biodiversity in India.

There is no gainsaying the fact that biodiversity has its direct or indirect role in fulfilling the needs of humans on the Earth. It provides us, among other things, food, energy, pharmaceuticals, raw materials, and industrial chemicals. However, over–exploitation of natural resources, indiscriminate human activities, hunting and poaching, pollution and global warming have all contributed to dwindling biodiversity causing potential threat to it.

In 2007, the IUCN (International Union for the Conservation of Nature and Natural Resources) after making survey of around 13,88,137 species belonging to eight main biological groups (mammals, birds, reptiles, amphibians, fish, insects, mollusks and plants) found that of these, around 15,790 biological species are endangered. There is a red data book with IUCN that keeps record of all endangered animal and plant species.

As far as India is concerned, it is estimated that around 659 species are endangered. The list includes 96 species of mammals, 76 species of birds, 65 species of amphibians, 40 species of fish, 25 species of reptiles, 2 species of mollusks, 109 species of other life forms and 246 species of plants. The cheetah, which was found in India, has already suffered extinciton. Seven plant species of India have also undergone extinction. The danger of extinciton is looming large on many more animal and plant species too. Vulture, tiger, sparrow, taxol (a plant from which medicine for treatment of cancer is obtained) etc., form but only part of the whole list.

Efforts to Conserve Biodiversity

Efforts are on in the country to save biodiversity by adopting various means and measures. Besides national parks, wild life sanctuaries and biosphere reserves, some special projects for protection of select animals have also been started. These include Project Tiger, Project Elephant, Hangul Project, Crocodile Breeding Project, Himalayan Musk Deer Project and Manipur's Thamin (Browantlered deer- cervus eldi eldi) project.

Efforts are also being made to conserve biodiversity through legal measures. The Government of India implemented the Wild life (Protection) Act with effect from 1972. Amendment to this Act was made in 2003 (the amended Act is effective from 1 April 2003). The provisions for fine and punishment have been made more stringent in the amended Act.

Efforts are also on to save biodiversity under the National Biodiversity Task Force set up by the Government of India in 1999. For conservation of biodiversity, the Biodiversity Act (2002) is also in operation. For protection of coastal biodiversity, particularly coastal plants, the Coastal Management Zone Draft Modificaiton (2008) is also an important step forward. Efforts are also being made under the National Forest Policy (1988) and the National Environment Policy (2006) to conserve biodiversity.

Indeed biodiversity constitutes an important part of the natural beauty of the planet Earth. Therefore, the effort to conseve biodiversity is not only an effort to save animals and plants but also an endeavour to safeguard life and nature in the holistic sense of the term. This has to be taken as a mission. The role of every single indivisual is important in this mission. People need to be educated with a view to creating awareness in them so that they understand and appreciate the importance of biodiversity conservation. ❐

E-learning: Pedagogical Paradigm Shift in Favour of Open and Distance Learning

❒ Dr. Devendra Singh

Introduction

We are living in an electronic age. In 70's after the emergence of personal computer, computer aided instruction (CAI) and computer based training (CBT) had gained wide acceptance. But it was internet which brought revolutionary changes in learning style. Today, e-learning encompasses the use of CD-ROM, mobile phone and personal digital assistance. E-learning uses a network of delivery, interaction or felicitation. It is also known as technology beyond boundaries to bring courses to anyone with a computer and an internet connection anywhere in the world. E-Learning is naturally suited to distance and flexible learning but can also be used in conjunction with face to face teaching which is called **blended learning.** As a matter of fact, E-Learning is making education more personalised.

With advancement of Information and communication Technology (ICT), people require a change in the teaching - learning process from the traditional one-size-fits all to differentiated teaching. Education in the digital world of today, can actually make that meaningful shift by ensuring that if students do not learn the way they are taught, they can be taught the way they learn. This pedagogical shift, when integrated into educational software and appropriate technology, can make learning exciting and enjoyable while securing successful learning outcomes in shorter time frames. While educational institutions globally lend to use asynchronous or delayed technologies with an instructor as the basis of e-learning and thereby include tools like online discussion forums, electronic books, online examinations and grading, online mentoring, web linked shared tools, student profiling and course material, synchronous presentation tools which include application sharing, web browsing, audio and video streaming, chat rooms, surveying and polling are all gaining ground as emerging and enhanced pedagogy.

(Murahari 2008)

E-Learning

E-learning (electronic learning) is not easy to define. Hirumi (2002) defines e-learning as "Learning that is stimulated primarily through the use of telecommunication technologies, such as electronic mail, bulletin board systems, electronic white boards, inter-relay chat, desktop video conferencing and world wide web". Electronic learning incorporates all forms of online instruction using personal computers. To-date, e-learning has now moved beyond the days of CAI and CBT via CD-ROM on the desktop to web based instructional training "anytime, anywhere" on the internet.

Pedagogy in E-Learning

Pedagogy is defined as the art or science of teaching students. Pedagogy is also sometime referred to as the correct use of teaching strategies. The main focus of teaching is to facilitate

❒ Dr. Devendra Singh, Reader, Faculty of Education, Satish Chandra PG College, Ballia, Uttar Pradesh

learning. Learning is often defined as relatively permanent change in behaviour. N. L. Gage (1969) considers that process of teaching and learning must be adopted to each other so as to pay off the best. It is possible to use various pedagogical approaches for e-learning which include :

1. The traditional pedagogy of instruction which is curriculum focused and is developed by a centralized educating group or a single teacher.
2. **Social constructivist:** This pedagogy is particularly well afforded by the use of discussion forums, blogs, wild and online collaborative activities. It is collaborative approach that opens educational contents creation to a wider group including the students themselves.
3. Laurillard's Conversational Model is also particularly relevant to e-learning and Gilly Salmon's Five Stage Model is a pedagogical approach to the use of discussion boards. (Kumar-2009)
4. Cognitive perspective focuses on the cognitive processes involved in learning as well as how the brain works.
5. Emotional perspective focuses on the skills and behavioural outcomes of the learning processes.
6. Contextual perspective focuses on the environmental and social aspects which can stimulate learning. Interaction with other people, collaborative discovery and the importance of peer support as well as pressure.

While developing e-learning materials in the constructivist paradigm, an effective learning environment needs to be created. An effective learning environment should be learner centred, assessment centred, knowledge centred and community centred. (Mishra, S-2008)

Paradigm Shift in Teaching Methodology

Traditional Methodology	Modern Methodology (Electronic based)
1. 'Chalk and Talk' Method	1. Participative and Interactive Method
2. Teacher-Centric approach	2. Learner-Centric approach
3. Conditioned environment	3. Flexibility in the setting
4. Passive and less interactive learner	4. Active and more interactive learner
5. More theoretical oriented	5. More of application oriented
6. Spoon feeding	6. Self paced learning
7. Feedback over a period of time	7. Immediate feedback
8. Logico-scientific mode of knowledge	8. Narrative
9. Reductionist, facts and memorization	9. Constructivist, inquiry and invention

E-Learning (electronic based methodology of teaching and learning) has made the open and distance learning work of education accessible at anytime and anywhere and from education for the few who could afford it to every one.

Advantages of E-learning

1. It is less expensive than instructor-led classroom training. Some of the course savings, plus travel costs, could amount to thousands of dollars over traditional classroom learning.
2. It provides a convenient and flexible means for students to upgrade their skills at their own time and schedule. This becomes important when motivation for learning comes directly from the student and he/she does not want to sacrifice peak hours for other work.
3. Students can get individualized attention and feedback from the online instructor. They could choose to actively participate in online discussion forums or ask questions and receiving answers in the privacy of e-mail 24 hours a day, subject to the availability of the instructor.
4. Students can have networking access to fellow classmates taking the same course. The access could provide additional knowledge sharing and learning, even after the course has ended.
5. It is most suitable for promotion of open and distance learning mode of education and taking education to the door steps of those who have been deprived of the opportunity so far.
6. It signals an organization's commitment to training as a core value because it promotes technological innovation in training. With cost-effective online learning tools, the organization will be able to maintain a competitive workforce, maximize intellectual capital, attract new students or retain employees in the workforce. It provides the means for life-long learning since it addresses the needs of students who require constant education, especially those working in the technology field.

Disadvantages of E-learning

1. It is not a panacea for everything. In certain areas of online instruction (e.g., psycho-motor procedural learning), it is not an absolute solution since observatory and hands-on skills are required under specialized workshop conditions. Under such circumstances, e-learning could only serve to complement other core learning activities.
2. Social interaction is reduced and students do not have ample opportunities for group project work, presentations or personal interaction as part of overall personal development.
3. In the corporate workplace, learning is sometimes moved out of the workday into the employees' own uncompensated time under the disguised motivation of the employer.
4. Students need to be extremely focused and disciplined in order to complete the courseware. With interruptions at the workplace or home, getting back on track requires effort in following the online course.
5. Tracking a student's performance becomes difficult since e-learning is not normally associated with management systems for feedback and analysis.
6. E-learning courses will get quickly outdated, posing updating and maintenance difficulties to keep up with dynamic knowledge.

Conclusion

From the above discussion, it may be concluded that 'E-Learning' is the need of hour. We have made progress in this area but implementation in desired direction is also essential because India

is online but most Indians are not. Therefore, the course of e-learning should be based on learner's objectives and entry level knowledge, skills and preferences. The quality and relevant education has become the important key factor for every learner. E-learning has opened up new vistas in the way of education. ICT based advancement and learners' demands have changed the paradigm from a chalk and talk environment to click and learn arena, hence, the birth of a new educational tool-e-content. The concept of teacher as a primary source of knowledge in the classroom has gone. E-learning transforms the learner from a passive recipient of information to an active participant in the teaching-learning process.

REFERENCES:

1. Kumar, Usha (2009): **Reform in Pedagogy Through TQM,** University News, Association of Indian Universities, New Delhi, Vol. 47, No. 13, March 30-April 05, 2009.
2. Mishra, S. (2008): **Developing E-Learning Materials: Some Pedagogical Concerns,** Indian Journal of Open Learning, volume 17, No.-2, May 2008, IGNOU, New Delhi.
3. Murahari, B. (2008): **Teaching Today for Tomorrow** University News, AIU, New Delhi, Vol. 46, No.-15, April 14-20, 2008.
4. Sagar, Krishna (2005): **Dictionary of Digital Education**. New Delhi, Authors Press.

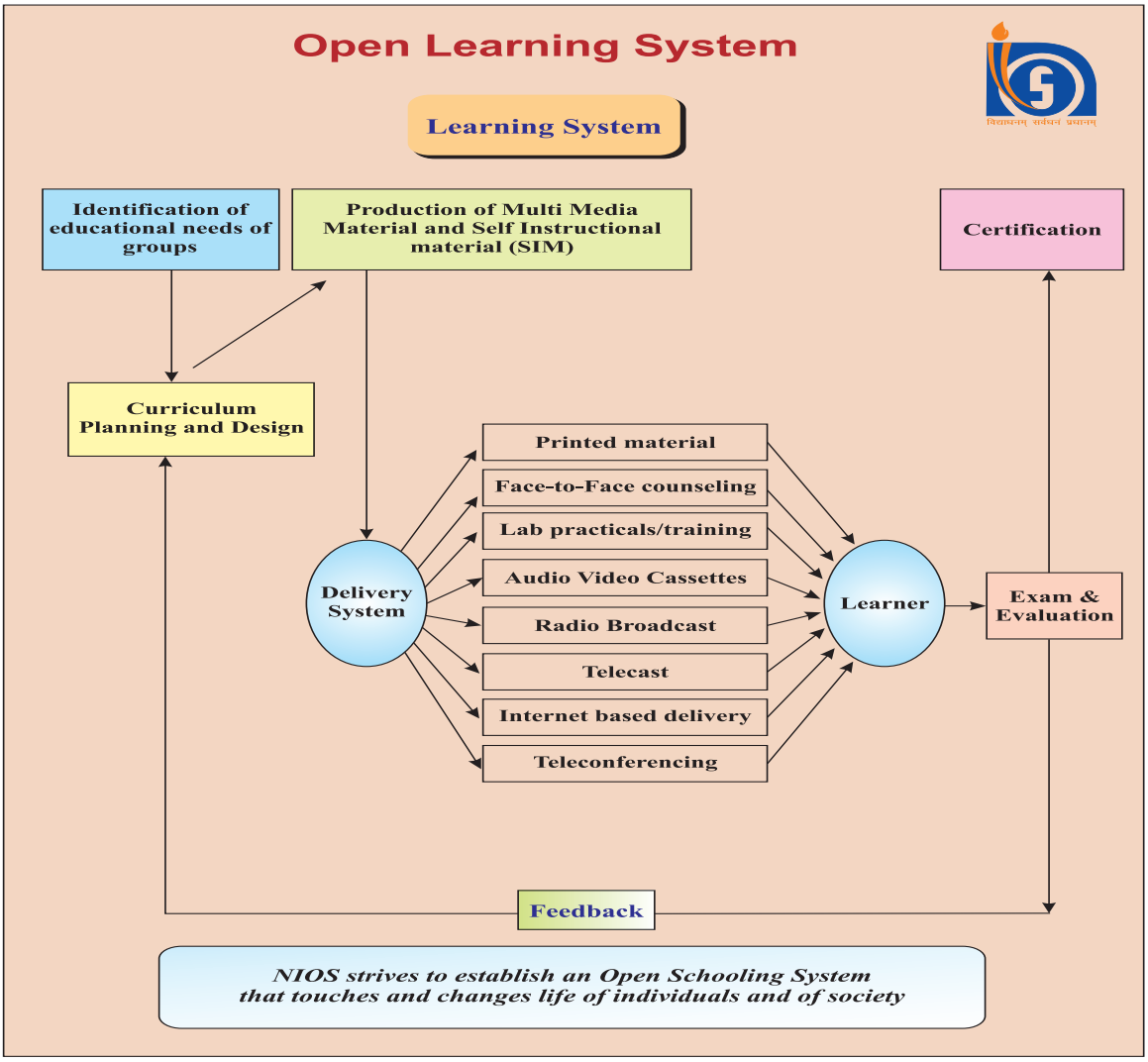

Spices in Our Diet: A Role Beyond Food Flavouring

❒ Dr. K. Srinivasan

Spices are consumed all over the world as food adjuncts to enhance sensory quality of foods, the quantity and variety consumed in tropical countries being particularly extensive. The primary function of spices in food is to improve the sensory quality of our otherwise insipid food preparation in terms of flavour, colour and aroma. Many spices like coriander, cumin, cinnamon, asafoetida, clove, cardamom, garlic, onion, etc., impart typical characteristic aroma or flavour to different foods. Red pepper or black pepper gives the desired pungency; Spices such as turmeric impart attractive colour to food enhancing eye appeal, while fenugreek can alter the textural property of food. Besides enhancing flavour and aroma of food, spices have also been long recognized to possess physiological effects supposed to be beneficial to human health. They act as stimulus to the digestive system, relieve digestive disorders, and some spices have some antiseptic value. Their attributes such as tonic, carminative, stomachic, diuretic, anti-spasmodic largely empirical nevertheless efficacious have earned them pharmacological applications in the indigenous system of medicine in India and other countries.

With the long history of the use of spices and herbs dating back to 5000 years BC, and spices significantly contributing to human health by providing bioactives, they may be considered to be one of the first ever recorded functional foods. Spices may act synergistically to enhance the health-related properties of other foods. Spices make foods palatable without salt and hence may assist to meet the recommended reduced daily intake of sodium. Similarly, they make foods palatable without fat, thus assisting to meet guidelines for healthy fat intake. The use of spices may encourage variety in food intake. Use of spices supports nutrient diversity by encouraging number of food choices.

❒ Dr. K.Srinivasan, Senior Scientist, Department of Biochemistry & Nutrition, Central Food Technological Research Institute, Mysore - 570 020.

Table 1: Medicinal properties of spices recognized for long time

Spice	Medicinal Properties
Turmeric (*Curcuma longa*)	Anti-inflammatory, diuretic, laxative, good for afflictions of the liver, jaundice, diseases of blood
Red pepper (*Capsicum annuum*)	Anti-inflammatory, for pain relief (Rheumatism neuralgia), useful in indigestion, rubefacient
Garlic (*Allium sativum*)	Anti-dyspeptic, anti-flatulent, for ear infection, duodenal ulcers, as rubefacient in skin diseases
Onion (*Allium cepa*)	Diuretic, emmenagogue, expectorant, for bleeding piles
Fenugreek (*Trigonella foenumgraecum*)	Diuretic, emmenagogue, emollient, useful in heart dieseaes
Cumin (*Cuminum cymminum*)	Antispasmodic, carminative, digestive, stimulant
Coriander (*Coriandrum sativum*)	Anti-dyspeptic,

The spice trade, probably, is the most ancient trade practiced by man. The affluence generated by the spice trade has been responsible for several historic voyages and discoveries of new lands. Today, the annual global spice trade is estimated to be over $2000 million involving a quantity of 500,000 tons. Incidentally, India is not only the largest producer of spices but also the biggest exporter and the largest consumer of spices in different forms. Over 60 varieties of spices are grown in India which include the pungent spices, aromatic fruits, umbelliferous fruits, aromatic barks, phenolic spices and colour spices. Spices are not only used individually but also in the form of spice mixtures known as curry powders to suit different tastes and dishes.

Nutrient make up of spices

Although spices have never been considered to be contributing anything to human nutrition, this group of food adjuncts is in use in human diets for centuries as flavour modifiers to make food more palatable. Interestingly, the protein content in spices varies from 4.5 % in rosemary leaves to 31.5% in mustard, fat level varies from 0.6 % in garlic to 42.6 % in mustard. The ash content can be anywhere from 2.3 % in marjoram to 16.7% in basil leaves reflecting high mineral levels in them. Some of them contain significant levels of vitamins and minerals, which cannot be ignored. A few spices are also rich sources of dietary fibre. Amongst common spices consumed, the dietary fibre is highest in chilli, as high as 43.3% while

black pepper (27.8%), coriander (36.2%), cumin (23.0%), fennel (28.7%) and fenugreek (33.5%) also are rich sources of dietary fibre, both soluble as well as insoluble. However, due to low levels of consumption of spices, their impact on nutrient make up may not be as dramatic vis-a-vis other food ingredients.

Nutraceutical attributes of spices

In the last three decades, many beneficial physiological effects of spices have been experimentally documented which suggest that the use of these food adjuncts extend beyond taste and flavour. The components of spices responsible for the quality attributes have been designated as active principles, and in many instances they are also responsible for beneficial physiological effects of spices. Thus, curcumin of turmeric, capsaicin of red pepper, piperine of black pepper, and eugenol of cloves are responsible for the beneficial effects of the respective spices. The salient features of multifaceous beneficial physiological effects of spices so far documented are summarized below:

Digestive stimulant action: The digestive stimulant action of spices is probably the most common experience. Spices like ginger, mint, ajowan and garlic are used as ingredients of pharmacological preparations for digestive disorders. Extensive animal studies have revealed that many spices (curcumin, capsaicin, ginger, fenugreek, mustard, cumin, coriander, ajowan, tamarind and onion) stimulate bile acid production by the liver and its secretion into bile. Bile acids play a major role in fat digestion and absorption. Several spices are also evidenced to stimulate the activity of digestive enzymes of pancreas, particularly lipase and terminal digestive enzymes of small intestinal mucosal upon continuous intake.

Antidiabetic potential: In a search for novel dietary antidiabetic agents, spices have also been examined. Fenugreek, garlic and onion, and their sulfur compounds, turmeric and its colouring principle - curcumin have been found to be effective in improving the glycemic status and glucose tolerance in diabetic animals / NIDDM patients. Animal studies and clinical trials on antidiabetic properties of fenugreek and onion have been particularly extensive, while human studies are limited in the case of garlic and turmeric. Addition of fenugreek seeds to the diets of diabetic patients or animals results in a fall in blood glucose and improvement in glucose tolerance. The hypoglycemic effect is attributed to the fibre and gum, which constitute as much as 52% of the seeds. The fibre-rich fenugreek is believed to delay gastric emptying by direct interference with glucose absorption. The hypoglycaemic potency of garlic and onion is attributed to the disulfide compounds present in them, which cause direct or indirect stimulation of insulin secretion by the pancreas. In addition, they may also have insulin-sparing action by protecting from sulfhydryl inactivation. Nephropathy is a common complication in chronic diabetes. Dietary curcumin and onion have been shown to ameliorate kidney lesions in streptozotocin diabetic rats. Hypocholesterolemic effects as also their ability to lower the extent of lipid peroxidation under diabetic condition are implicated in the amelioration of renal lesions. Capsaicin, the pungent principle of red chilies has been shown to be useful in diabetic neuropathy.

Anti-atherogenic and Cardioprotective effect: The importance of blood cholesterol levels in relation to atherosclerosis and coronary heart diseases is well known. Several common spices have been evaluated for a possible cholesterol lowering effect in a variety of experimental situations in both animals and humans.

Fenugreek, garlic, onion, turmeric and red pepper are found to be effective as hypocholesterolemics under various conditions of experimentally induced hypercholesterolemia / hyperlipidemia. Further, fenugreek, onion and garlic are effective in humans with hyperlipidemic condition. Consumption of garlic or garlic oil has been associated with reduction in total cholesterol, low-density lipoprotein cholesterol, and triglyceride levels. In addition, garlic exhibits anti-thrombotic and hypertensive properties, which also contribute to cardiovascular protection besides the hypolipidemic properties.

Anti-lithogenic effect: Persistent lithogenic diet leads to cholesterol saturation in bile resulting in formation of cholesterol crystals, i.e., gallstones in gall bladder. Studies on experimental induction of cholesterol gallstones in mice and hamsters by feeding a lithogenic diet have revealed that the incidence of gallstones is 40-50% lower when the animals are maintained on 0.5% curcumin or 0.015% capsaicin containing diets. Animal studies have also revealed significant regression of preformed cholesterol gallstones by these spice principles in a 10-week feeding trial. The antilithogenic potential of other known hypocholesterolemic spices – garlic, onion and fenugreek seeds have also been recently evidenced in animal studies. The anti-lithogenicity of these spices is considered to be due to lowering of cholesterol concentration and enhancing the bile acid concentration, both of which contribute to lowering of cholesterol saturation index and hence its crystallization. In addition to their ability to lower cholesterol saturation index, the antilithogenecity of these spice principles may also be due to their influence on biliary proteins

Antioxidant activity: Generation of reactive oxygen species and other free radicals during metabolism is a normal process that is ideally compensated for by an elaborate endogenous antioxidant defense system. Excessive free radicals generation over-balancing the rate of their removal leads to oxidative stress. Oxidative damage has been implicated in the etiology of disease processes such as cardiovascular disease, inflammatory diseases, cancer, neurodegenerative diseases, and other degenerative diseases. Antioxidants are compounds that hinder the oxidative processes and thereby delay or suppress oxidative stress. There is a growing interest in natural antioxidants found in herbs and spices. The bioactive compounds present in spices possess potent antioxidant property that are experimentally evidenced to control cellular oxidative stress and thereby exert a beneficial role in preventing oxidative stress mediated diseases.

Most of the health effects of spices on cancer, cardiovascular diseases, inflammatory diseases and neurodegenerative diseases may be mediated through their potent antioxidant effects. Supression of oxidative stress and inflammation by spices is important in their cancer preventive role, since both oxidative stress and inflammation are a risk factor for cancer initiation and promotion. The antioxidative effects of curcumin, eugenol, capsaicin, piperine, gingerol, garlic, onion, and fenugreek have been experimentally evidenced. The studies to this effect are exhaustive and experimental evidences are plenty in the case of curcumin of turmeric and eugenol of clove. Studies with several *in vitro* systems as well as *in vivo* animal studies have revealed that spice principles curcumin, eugenol and capsaicin have beneficial antioxidant property by quenching oxygen free radicals, by inhibiting the production of reactive oxygen radicals, and by enhancing the antioxidant enzyme activities. The antioxidant activity of the spice compounds in mammalian system involve one or more of the following: (1)

free radical scavenging, (2) suppressing of lipid peroxidation, (3) enhancing the antioxidant molecules in tissues, (4) stimulating the activities of endogenous antioxidant enzymes, (5) Inhibition of the activity of inducible nitric oxide synthase, (6) Inhibition of LDL oxidation and (6) Inhibition of enzymes of arachidonate metabolism - 5-lipoxygenase and 2-cyclooxygenase enzymes. By virtue of antioxidant activity, curcumin has been documented to be anti-inflammatory, anti-mutagenic and cancer preventive, anti-atherogenic and cardioprotective, hepatoprotective, neuro-protective, anti-cataractogenic, effective wound healant, etc.

Anti-inflammatory property: With increasing interest in alternatives to non-steroidal anti-inflammatory agents in the management of chronic inflammation, the use of food based approaches is emerging. Lipid peroxides play a crucial role in arthritis and other inflammatory diseases. Turmeric happens to be the earliest anti-inflammatory drug known in the indigenous system of medicine in India. Turmeric extract, curcuminoids, and volatile oil of turmeric have been found to be effective as anti-inflammatory in several studies involving mice, rats, rabbits, and pigeons. The efficacy of curcuminoids was also established in carrageenan induced foot paw edema in mice and rats and in cotton pellet granuloma pouch tests in rats. Both *in vitro* and *in vivo* animal experiments have documented the anti-inflammatory potential of spice principles curcumin, capsaicin and eugenol. Animal studies have revealed that curcumin and capsaicin also lower the incidence and severity of arthritis and also delay the onset of adjuvant induced arthritis.

Anti-inflammatory effect of curcumin (400 mg) in patients undergone surgery for hernia / hydrocele was found comparable to that of phenylbutazone (100 mg). In rheumatoid arthritis patients, administration of curcumin (1.2 g/day) produced significant improvement similar to phenylbutazone. Recently, capsaicin has received considerable attention as a pain reliever. In patients with osteoarthritis and rheumatoid arthritis, topical application of creams containing 0.025% or 0.075% capsaicin was an effective and safe alternative to analgesics employed in systemic medications which are often associated with potential side effects. Capsaicin has also been suggested for the initial management of neuralgia consequent to herpes infection. There is also evidence for the benefit of ginger in ameliorating arthritic knee pain, although the effectiveness is lesser than that of ibuprofen. Ginger doses of 0.5 - 1.0 g per day have been found to be efficacious in osteoarthritis and rheumatoid arthritis.

Antimutagenicity and anti-cancer effect: There are several studies suggesting that spices may have a chemopreventive effect against the early initiating stages of cancer. Spices may act through several mechanisms to provide protection against cancer. Certain phytochemicals from spices have been shown to inhibit one or more of the stages of the cancer process (initiation, promotion, growth and metastasis). Inhibition of phase I metabolic enzymes (involved in procarcinogen activation) and induction of phase II metabolic enzymes (involved in carcinogen deactivation) may account for the chemo-preventive effects of spices. Spices may also protect against oxidative stress and inflammation, both of which are a risk factor for cancer initiation and promotion (as well as other pathological conditions). Spices that have antioxidant property can function as antimutagens. Since, mutagenesis has a direct bearing on cancer initiation, anti-mutagenic spices can probably be anticarcinogenic too. Turmeric / curcumin, garlic / its sulfur compounds have been shown to be antimutagenic in several experimental systems.

Spices with known anticarcinogenic effects in animal models of cancer include turmeric, garlic and ginger. Turmeric has been found to have chemopreventive effects against cancers of the skin, forestomach, liver, colon, and oral cancer in mice. The anticancer potential of curcumin as evidenced by both preclinical and clinical studies has been exhaustively reviewed recently. Several studies indicate that curcumin can suppress both tumour initiation and tumour promotion. Some of these studies, especially studies of skin tumorigenesis, have also employed topical application of curcumin. Chemo-preventive activity of curcumin is observed when administered prior to, during, and after carcinogen treatment as well as when it is given only during promotion/progression phase of colon carcinogenesis in rats. Curcumin is a powerful inhibitor of the proliferation of several tumour cells. With many evidences suggesting that curcumin can suppress tumour initiation, promotion and metastasis, and with proven safety of its consumption (up to 10 g per day), curcumin offers enormous potential in the prevention and therapy of cancer.

In summary, many health beneficial attributes of these common food adjuncts have been recognized in the past four decades. A few of the above health beneficial attributes of spices have the potential of a possible therapeutic exploitation in a variety of disease conditions. In view of the many promising health beneficial physiological effects spices are understood to exert, these food adjuncts have now assumed the status of "Nutra-ceuticals" and are considered as the natural and necessary component of our daily nutrition. Since each of the spices possesses more than one health beneficial property and that there is a possibility of synergy among them in their action, a spiced diet is likely to make life not only more 'spicy' but more healthy also.

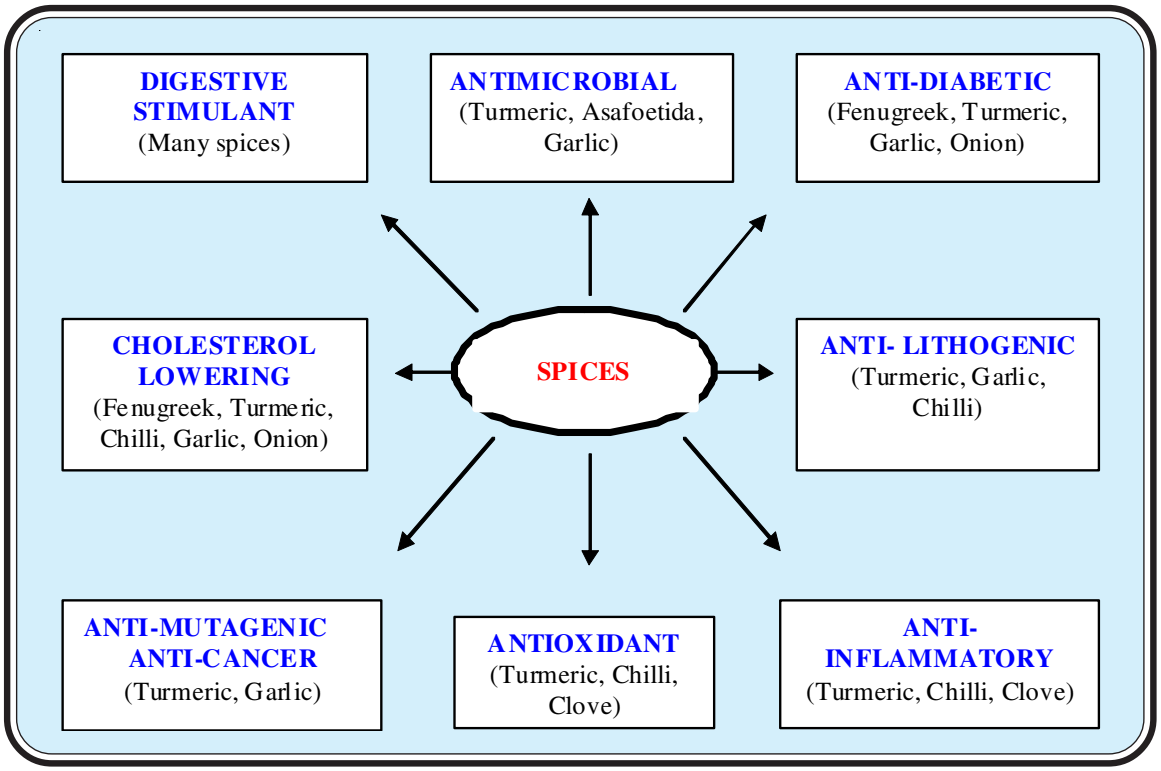

International Year of Chemistry-2011

Jacobus Henricus van't Hoff

The First Nobel Laureate in Chemistry

❐ Subodh Mahanti

The Academy has awarded the Nobel Prize for Chemistry to Jacobus Henricus Van't Hoff, Professor in the University of Berlin, for his pioneering work on chemical dynamics and osmotic pressure in solutions. As a result of his investigations in the fields of atomic and molecular theory Van't Hoff has made the most important discoveries in theoretical chemistry since Dalton's time. With regard to atomic theory Van't Hoff, following an idea put forward by Pasteur, advanced the hypothesis that elementary atoms have attachment points geometrically oriented in space – a hypothesis which in so far as carbon compounds are concerned led to the theory of the asymmetry of carbon atoms to the founding of stereochemistry. Still more revolutionary were Van't Hoff's discoveries in the field of molecular theory…"

- C. T. Odhner, President of the Royal Swedish Academy of Sciences in his Nobel Prize Presentation Speech in 1901

Jacobus Henricus van't Hoff was the winner of the inaugural Nobel Prize in Chemistry in 1901. He was awarded the Prize "in recognition of the extraordinary services he has rendered by the discovery of the laws of chemical dynamics and osmotic pressure in solutions." His major contributions were in the areas of chemical kinetics, chemical equilibrium, osmotic pressure and crystallography. He introduced the modern concept of chemical affinity. His works have penetrated all branches of chemistry. He along with the Swedish chemist Svante Arrhenius (1859-1927), the American physicist Josiah Willard Gibbs (1839-1903) and the German chemist Wilhelm Ostwald (1853-1932) helped establish physical chemistry as a distinct discipline of chemistry - the branch of chemistry that deals with the interpretation of chemical phenomena and properties in terms of underlying physical processes, and with the development of techniques for their investigations. In 1887, van't Hoff, jointly with Ostwald, founded the scientific journal *Zeitschrift fur physikalische Chemie*

Jacobus H. Van't Hoff

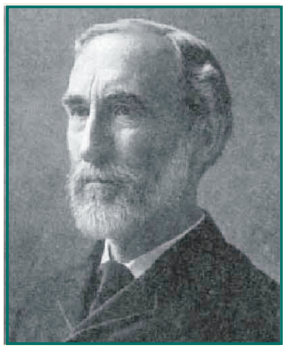

Josiah Willard Gibbs

Wilhelm Ostwald

❐ Dr. Subodh Mahanti, Scientist F, Vigyan Prasar, A-50, Institutional Area, Sector- 62, NOIDA-201307.

(Reproduced with thanks from Vigyan Prasar, Dream 2047, January 2009, Vol. 11, No. 4)

(*Journal of Physical Chemistry*), which played an influential role in the development of physical chemistry. Van't Hoff and Joseph Achille Le Bell discovered the tetrahedral carbon.

Auguste Comte

Philosophy also interested van't Hoff. He particularly became interested in the philosophical ideas of the French philosopher Auguste Comte (1798-1857) and French literary critic and historian Hippolyte Adolphe Taine (1828-1893). He had developed a fascination for poetry. His idol in poetry was English poet Lord Byron (1788-1824).

Jacobus Henricus van't Hoff was born on 30 August 1852 in Rotterdam, The Netherlands (or Holland). His father, also named Jacobus Henricus van't Hoff, was a medical doctor. His mother was Alida Jacoba Kolff. In his early age he developed an interest in science and a love of nature. In his childhood he often took part in botanical expeditions. He had his early education in a private school.

At the age of 17, van't Hoff decided to become a chemist. Despite his parents' unfavourable reaction to his decision, he entered the Polytechnic School at Delft in 1869 from where he obtained a diploma in chemical technology in 1871. He received his diploma in two years rather than the usual three years. However, during vacation-work in a sugar factory, he decided to abandon the career of a technologist in favour of a purely scientific career. He spent a year studying mathematics at Leiden before he went to Bonn to study chemistry under August Kekulé (1829-1896). From Bonn he went to Paris, where he studied under the French chemist Charles Adolphe Wurtz (1817-1884). He returned to The Netherlands in 1874 and in the same year he received his doctoral degree of the University of Utrecht. His research supervisor was Eduard Mulder. His doctoral dissertation was titled *Bijdrage tot de Kennis van Cyaanozijnzuren en Malonzuur* (*Contribution to the knowledge of cyanoactic acid and malonic acid*).

At the age of 23, van't Hoff unsuccessfully tried for a job of a school teacher. It is said that he was not given job of a school teacher because he appeared to be a daydreamer. He then became a lecturer in chemistry and physics at the Veterinary College in Utrecht, which he joined in 1876. After spending two years in Utrecht, he moved to the University of Amsterdam as Professor of Chemistry, Mineralogy, and Geology. He remained there for almost 18 years. In 1896, van't Hoff moved to Germany to become an Honorary Professor at Berlin University by virtue of his membership of the Prussian Academy of Sciences.

Lord Byron

Several months before submitting his Ph.D. dissertation, van't Hoff published a research paper, which effectively created a new branch of chemistry called stereochemistry, the study of the spatial arrangement of atoms in molecules and the chemical and physical consequences of such arrangements. The term "stereochemistry" was coined by Victor Meyer. The paper was titled *Voorstel tot Uitbreiding der Tegenwoordige in de Scheikunde gebruikte*

Structuurformules in de Ruimte etc. (*Proposal for the* History of Science*Lord Byron development of 3-dimensional chemical structural formulae*). It was published in the form of a pamphlet consisting of 12 pages of text and a 1-page diagram. His revolutionary ideas were further elaborated in his *Chimie dans l'Espace (The Chemistry in Space),* which was published in 1875. A German translation of this important work appeared two years later with an introduction by the German chemist Johannes Wislicenus (1835-1902). The English translation appeared much later in 1891.

Van't Hoff tried to solve the problems that originated with the discovery of optical compounds by the French physicist Jean Baptiste Biot (1774-1862). Optical compounds rotate the plane of polarised light. Louis Pasteur had been able to relate this property for salts of crystalline solids, to the dissymmetry of the crystals. He found that some crystals of tartaric acid would rotate polarized light to the right and some to the left. Pasteur explained this by showing actual asymmetry of the crystals. There were two types of crystals, which were mirror images to each other. Pasteur was of the opinion that molecules themselves were asymmetric but he had no proof to support his belief. That Pasteur was thinking in the right direction became apparent from the optical activity of solutions of noncrystalline substances. Van't Hoff took the clue from the observation of Kekulé that the four groups linked to a carbon atom could be equally distributed in the space around it. Van't Hoff proposed a tetrahedral carbon atom. He proposed that if the four groups or atoms attached to a carbon atom are all different from each other, they could be arranged about the carbon atom in two ways. Such alternative arrangements of a molecule would be non-superimposable mirror images, or in other words, they would be stereo-isomers. He further proposed that one form would rotate polarised light to the left and the other form to the right.

Joseph-Achille Le Bel

It may be noted that Joseph-Achille Le Bell (1847-1930), independently of van't Hoff proposed the idea of tetrahedral nature of carbon atom. However, he did not develop his ideas. It is strange that van't Hoff and Le Bell did not know each other's work although they were working side by side in Wurtz's laboratory in Paris during the academic year preceding publication of their pioneering work. However strange it may seem but it appears that they developed the idea independently and did not even discuss it with each other!

Van't Hoff's ideas were considered very extraordinary and they were strongly criticised by the chemists. The German organic chemist Hermann Adolf Kolbe (1818-1884), renowned editor of the German *Journal fur praktische Chemie*, wrote: "A Dr. H. van't Hoff of the Veterinary School at Utrecht has no liking, apparently, for exact chemical investigation. He has considered it more comfortable to Pegasus (apparently borrowed from the Veterinary School) and to proclaim in his *La chimie dans l'espace* how the atoms appear to him to be arranged in space, when he is on the chemical Mt. Parnassus which he has reached by bold fly." Ironically Kolbe's

Adolphe Wurtz

criticism actually helped further van't Hoff's ideas because it brought the work of the young investigator to the attention of his older colleagues. Works done by other chemists supported the van't Hoff theory, or more appropriately the van't Hoff-Le Bell theory. In 1887, Johannes Wislicenus published his work on geometric isomerism. It was a kind of stereoisomerism, which was not related to optical activity. The German chemist Victor Meyer (1852-1919) working in Heidelberg demonstrated the chemical effect of large-filling groups on organic molecules. Meyer termed this phenomenon "steric hindrance", which gave rise to stereoisomerism. Arthur Hantzsch and Alfred Werner working in Zurich studied the stereochemistry of organic compounds containing nitrogen. In Berlin, Emil Fischer used the concept of stereochemistry to interpret his fundamental research on carbohydrates.

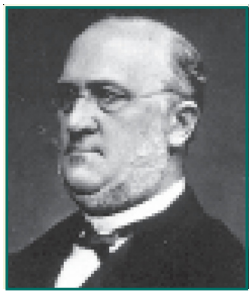
Hermann Adolf Kolbe

In 1884, van't Hoff published his work on chemical kinetics. It was titled *Etudes de Dynamique* (*Studies in Chemical Dynamics*). In this work, he introduced a new method for determining the order of a reaction using graphics and applied the laws of thermodynamics to chemical equlibria.

Van't Hoff made significant contribution in osmosis, the process by which solvent is transported through a semi-permeable membrane separating two solutions of different solute concentrations. The solvent is transported from the solution that is dilute in solute to the solution that is concentrated. Before describing van't Hoff's contribution to osmosis, let us briefly describe the development of the concept of osmosis. It was the Abbe Jean-Antoine Nollet (1700-1770), who first described osmotic behaviour in 1774. However, Nollet's work did not attract much attention. In 1826, the French physiologist Rene-Joachim-Henri Dutrochet (1776-1847) extended the scope of investigation of osmosis by applying it to plant movements. A simple osmometer constructed by Dutrochet showed that osmotic pressure could overcome gravity. Encouraged by this observation Dutrochet thought that osmosis might be responsible for many plant processes like rising of sap. In 1877, the German botanist and plant physiologist, Wilhelm Pfeffer (1845-1920) published his *Osmotic Investigations*. Though initially Pfeffer's work was not given due importance, it became the basis of further advancements in the understanding osmosis and its significance. The Dutch plant physiologist and geneticist Hugo de Vries (1848-1935) showed that osmosis accounted for turgor; that is, the distension of a plant cell wall and membrane by the fluid contents. Turgor can be seen as the internal pressure of healthy plant cell, which results from the resistance of the semi-rigid cell wall to the osmotic pressure generated by the cell protoplasm. Turgor is essential for the cell growth and the transport of nutrients. De Vries' most important contribution to the understanding of osmosis was to bring Pfeffer's work on osmosis to the attention of van't Hoff, who approached the problem differently. By assuming that there is a similarity between solutions and History of Science gases, he calculated osmotic pressures by applying

Abbe Jean-Antoine Nollet

the simple gas law equation, p = cRT (where p stands for pressure, c for concentration, T for temperature and 4. R is a constant). Here osmotic pressure is substituted for ordinary pressure of gases. The values of osmotic pressure calculated this way remarkably matched with the experimental values. This implied that osmotic pressure is determined by the concentration and temperature and that the structure of the membrane had no influence on it. The importance of van't Hoff 's approach soon became apparent. It was found that van't Hoff 's results could be used to determine the molecular weight of a substance in solution.

Wihelm Pfeffer

Besides being the first Nobel laureate in chemistry, Van't Hoff received a number of distinctions including the Davy Medal of the Royal Society of London (1893), and Helmholtz Medal of the Prussian Academy of Sciences (1911). He was appointed member of the Royal Netherlands Academy of Sciences. He was an honorary member of the British Chemical Society in London, the Royal Academy of Sciences in Gottingen, the American Chemical Society and the Academie des Sciences in Paris. A laboratory at the Utrecht University has been named after him.

Van't Hoff gave lot of importance to the power of imagination in scientific work. His inaugural address on taking up his professorship in Amsterdam was titled "The Power of Imagination in Science." According to him, the most prominent scientists have possessed this quality in a high degree. His own discoveries were based on power of imagination.

Van't Hoff died on 1 March 1911 at Steglitz near Berlin, Germany

References

1. Eliel, Ernest L., *Stereochemistry of Carbon Compounds*, New Delhi: Tata McGraw-Hill Publishing Company Ltd., 1976.
2. Morrison, Robert Thornton, Robert Neilson Boyed, *Organic Chemistry* (Fourth Edition), Boston: Allyn and Bacon, Inc, 1983.
3. Gadre, Shridhar R., Century of Nobel Prizes - 1901 Chemistry Award: Jacobus Henricus van't Hoff (1852-1911), *Resonance*, December 2001.
4. Heilbron, J. L. (ed.), *The Oxford Companion to the History of Modern Science*, Oxford: Oxford University Press, 2003.
5. *A Dictionary of Scientists*, Oxford: Oxford University Press, 1999.
6. Millar, David, Ian Millar, John Millar and Margaret Millar, *The Cambridge Dictionary of Scientists*, Cambridge: Cambridge University Press, 2002.
7. Bagchi, Asoke K., *Hinduja Foundation Encyclopaedia of Nobel Laureates* 19011987, Delhi: Konarak Publishers Pvt Ltd., 1990.
8. Available sources on the Internet.

(*The article is a popular presentation of the important points on the life and work of Jacobus Henricus Van't Hoff available in the existing literature. The idea is to inspire the younger generation to know more about van't Hoff. The author has given the sources consulted for writing the article. However, the sources on the Internet are numerous and so they have not been individually listed. The author is grateful to all those authors whose works have contributed to writing this article.*)

The Fascinating Land of Primes

❒ Utpal Mukhopadhyay

Introduction

In the primary stage of our learning, we get ourselves acquainted with two main things, viz., alphabets and numerals. During our learning of numbers, first of all we become familiar with positive integers. Afterwards, we encounter prime numbers. But, in the present set up of the curriculum, there is very little scope to study prime numbers in detail. For this reason, most of the students cannot realize the importance of prime numbers in mathematics. In fact, prime numbers are the building blocks in the number system. So, in the present article, an attempt has been made to show a glimpse of the treasures hidden in the land of prime numbers. Let us start our journey from a very basic level.

Different Types of Primes

We now that if a number has only two factors, viz., 1 and the number itself, then it is called a prime number. Numbers having more than two factors are known as composite numbers. Since 1 has only one factor, it is neither a prime nor a composite. It is called unity. 2 is the only even prime number. All other primes are odd. Numbers which can be expressed as a product of only two prime numbers are called 'almost prime numbers'. For example, 15 (= 3x5), 21 (= 3x7), 35 (= 5x7) etc., are almost prime numbers. Now, the question arises whether the number of primes is finite or infinite. Greek mathematician Euclid (ca. 300 B.C.) proved in his famous book '*The Elements*' that the number of primes is infinite.

Twin Primes and Prime Triplets

Two consecutive odd primes are called twin primes. For instance, (3, 5), (5, 7), (11, 13) etc. twin primes. The term twin prime was given by Paul Stäckel (1862 – 1919). Till now it has not been possible to ascertain whether the number of twin primes is finite or infinite. However, in 1966 Chinese mathematician Chen-jinn-run proved that there are an infinite number of number pairs where the first number is a prime and the second one is an almost prime number.

Three consecutive odd primes are called 'prime triplet'. For instance, (3, 5, 7) is a prime triplet. A simple proof given below shows that there cannot be any other prime triplet except (3, 5, 7).

Proof: Let, (p, p+2, p+4) be a prime triplet.

Then, if we divide p by 3, it will leave remainders 1 or 2.

If the remainder is 1 then suppose, $p = 3k + 1$, where k is a positive integer.

Therefore, $p + 2 = 3k + 1 + 2 = 3 (k + 1)$ = a multiple of 3.

Hence, $p + 2$ cannot be a prime number.

Again, if the remainder is 2 then suppose, $p = 3k + 2$

Then, $p + 4 = 3k + 2 + 4 = 3 (k + 2)$ = a multiple of 3.

Hence, in this case $p + 4$ cannot be a prime number.

❒ Utpal Mukhopadhyay, Satyabharati Vidyapith, P. O. – Nabapally, Dist. – North 24 Parganas, Kolkata–700126, West Bengal, Email: umsbv@yahoo.in

Thus, in either case, we find that (p, p+2, p+4) cannot be a prime triplet.

So, there cannot be any other prime triplet except (3, 5, 7).

Perfect Numbers and Prime Numbers

A number is called a perfect number if the sum of its factors (except the number itself) equals the number. The smallest perfect number is 6 (= 1 + 2 + 3). Some other perfect numbers are 28, 496, 8128 etc. It is interesting to note that we can get the above four perfect numbers by putting n = 2, 3, 5 and 7 in the expression $2^{n-1}(2^n - 1)$. There is an interesting theorem concerning the perfect numbers and prime numbers.

Theorem If $(2^n - 1)$ is a prime number, then $2^{n-1}(2^n - 1)$ will be an even perfect number.

The above theorem was proved by Euler (1707 – 1783). In the 17th century, Marin Mersenne (1588 – 1648) suggested that the numbers $(2^{13} - 1)$, $(2^{17} - 1)$ and $(2^{19} - 1)$ are primes. For this reason, numbers of the form $(2^n - 1)$ are called Mersenne numbers.

Sophie Germain Primes

Sophie Germain (1776 – 1831) was a French lady mathematician who made significant contributions in number theory. If we a get a prime number by adding 1 to twice of a particular prime number, then that particular prime number is called a 'Sophie Germain prime' (SGP). 2 is the least SGP because by adding 1 to twice of 2 (i.e. 4) we get 5 which is a prime number. The second and third SGPs are 3 and 5 respectively. However, 7 is not a SGP because by the same rule we get 15 which is not a prime. It has not been possible to prove the finite or infiniteness of the numbers of SGP.

Some Interesting Results related to Primes

1. In 1640, Fermat (1601 – 1665) showed that the numbers of the form (4n + 1), where n is a natural number, can be expressed as sum of two squares. For instance,

   if n = 1, then $4n + 1 = 5 = 1^2 + 2^2$

   if n = 3, then $4n + 1 = 13 = 2^2 + 3^2$

2. Fermat observed in 1640 that if p be a prime, then the number $(n^p - n)$ will be divisible by p. For instance,

   if p = 3 and n = 2, then $(n^p - n) = 6$ which is divisible by 3 (= p).

   Euler proved this result in 1736.

3. In 1845, Joseph Bertrand (1822 – 1900) conjectured that there must be at least one prime between n and (2n – 2) for every integer n greater than three. For instance, if n = 4, we get the prime number 5 between 4 and 6; if n = 5, we get the prime 7 between 5 and 8; if n = 8, then we get two primes 11 and 13 between 8 and 14. Russian mathematician P. Chebyshev (1821 – 1894) proved Bertrand's conjecture in 1850. At present, this conjecture is known as Bertrand's postulate.

4. For any natural number n > 1, there exists at least one prime between n and 2n. For instance, we get 3 between 2 and 4; get 5 between 3 and 6; get 11, 13 and 17 between 9 and 18 etc. This theorem is known as Bertrand-Chebyshev theorem. Afterwards, Indian mathematician Ramanujan (1887 – 1919) provided an alternative proof of the theorem while Paul Erdös (1913 – 1996) gave a simpler proof.

Sophie Germain's Theorem

It has already been mentioned that Sophie Germain had important contributions in number

theory. The following theorem is known as Sophie Germain's Theorem. The proof of this theorem being of elementary nature and can be understood even by a school student. It is provided below to show the students the logical beauty inherent in mathematics.

Theorem If a is not equal to ± 1, then whatever may be the value of a, $(a^4 + 4)$ will always be a composite number.

Proof : $a^4 + 4$

$= (a^2)^2 + (2)^2$

$= (a^2 + 2)^2 - (2a)^2$

$= (a^2 + 2a + 2)(a^2 - 2a + 2)$

$= \{(a+1)^2 + 1\}\{(a-1)^2 + 1\}$

Since a is not equal to ± 1, then clearly both $(a + 1)^2$ and $(a - 1)^2$ are non-zero numbers.

So, $(a^4 + 4)$ can be expressed as a product of two numbers none of which is 1.

Hence, $a^4 + 4$ is a composite number.

Failed Formulae for Primes

Time and again mathematicians have tried to provide a formula which will yield prime numbers. But, alas! Till now no formula has been discovered which can produce only prime numbers. However, it is interesting to know what formulae were suggested by different mathematicians and how they failed. So, let us discuss some failed formulae starting with the formula of Fermat.

1. Fermat's Formula

In the year 1640, Fermat suggested the formula $Fn = 2^{2^n} + 1$ for generating primes where n is a positive number. By putting n = 0 we get 3 which is a prime number. Similarly, for n = 1 we get the prime number 5. Also, F_2, F_3 and F_4 are prime numbers. But, Euler showed in 1732 that Fermat's formula fails for n > 4 because F_5 is 4294967297 which is a product of 641 and 6700417 and hence F_5 is composite. However, in honour of Fermat, the primes F_0, F_1, F_2, F_3 and F_4 are called Fermat primes.

2. Euler's Formula

Euler proposed the formula $n^2 + n + 1$ for generating primes. The formula holds good for n = 0 to 39 but fails for n = 40 because in that case, we get 1641 which is 41^2. Computer calculation has shown that 47.5% of the numbers generated by Euler's formula are primes and it works well for small values of n. If n < 2389, then the possibility for finding primes is 50% and if n < 100, then we get 86 primes and only 14 composite numbers. Afterwards, it has been found that the formula $n^2 - n + 41$ fails for n = 41 because in that case we get 41^2. The formula $n^2 - 79n + 1601$ fails for n = 80 because in that case we get 1681 which is again 41^2.

3. Ulam's Formula and Doodle

Stanislaw Ulam (1909 – 1984) was an American mathematician of Polish-Jewish origin. Ulam and his co-workers proposed the formula $4n^2 + 170n + 1847$ for primes. This formula is not a universal formula for primes, yet it generates 760 new primes which cannot be obtained from Euler's formula. The success rate of this formula is 46.6%. It may be mentioned that the formula $4n^2 + 4^n + 59$ yields 1500 new primes which cannot be found by either Euler's formula or Ulam's formula.

In 1963, while scribbling with numbers, Ulam discovered a pattern related to prime numbers. He noticed that if a spiral is constructed by writing down a rectangular grid of numbers, starting with 1 at the centre and spiraling outwards, then the prime numbers fall along diagonal lines. This

rectangular arrangement of numbers is known as Ulam's doodle. Afterwards, Ulam and his collaborators Myron Stein and Mark Wells produced spiral pattern for numbers up to 65,000 by using MANIAC II computer. In Fig. 1, a small doodle of Ulam is shown which contains numbers from 1 to 49. The prime numbers are shown in circles in the following table.

(37)	36	35	34	33	32	(31)
38	(17)	16	15	14	(13)	30
39	18	(5)	4	(3)	12	29
40	(19)	6	1	(2)	(11)	28
(41)	20	(7)	8	9	10	27
42	21	22	(23)	24	25	26
(43)	44	45	46	(47)	48	49.....

Fig. 1: Ulam's Little Doodle

Epilogue

In the preceding discussion, only a glimpse of the treasures of the prime world has been shown. In fact, it is not possible to discuss the huge amount of interesting features of prime numbers. For instance, the approximate formulae for primes as proposed by Gauss (1777 - 1855) and Lagrange (1736 - 1813) are left out due to their higher standard. Interested persons may go through any standard book on number theory to discover themselves the hidden treasures of the land of primes.

References

1. Stuart Hollingdal : ***Makers of Mathematics***; Penguin Books, 1989.
2. Paul Hoffman : ***Archimedes Revenge***; Fawcett Crest, New York, 1988.
3. Various sources on the internet.

The National Institute of Open Schooling Today

- The largest Open Schooling system in the world.
- 21,08,973 learners have been certified at the Secondary and Senior Secondary and Vocational level since 1990.
- More than 4,00,000 learners take admission every year.
- Reaches out through a network of more than 5,911 Study Centres (AIs/AVIs/AAs) spread all over the country and abroad.
- Imparts education through distance mode using a media mix of self-instructional print materials, audio, video and CD-ROM supported by Personal Contact Programmes at AIs. These are further supplemented by Radio Broadcast and T.V. programmes.

Employment Opportunities in Agriculture Sector

❒ Dr. Harender Raj Gautam

In India, more than 60 per cent of our population is directly dependent on agriculture for livelihood and survival and therefore the occupation of agriculture should be made productive and profitable. Agriculture in India uses 57 per cent of the work force, contributes 18 per cent to Gross Domestic Product (GDP) of the country. Unemployment is a major problem in India and presently more than 4.5 crore youth are unemployed in this country. While the percentage of the workforce employed in agriculture is declining, total employment in this sector continues to rise, though at significantly slower rates than in the past. Strategic initiatives are needed to modernize and diversify Indian agriculture so that it can generate employment opportunities for a very large number of people. One of the most important factors for employment generation in agriculture is to maintain high growth rate. India's population grew by 1.9 per cent between 1990-2007, while food production grew disproportionately by 1.2 per cent. Indian agriculture is a major support base of our economy and there is a need to make it more productive so that more employment opportunities are created. Food processing and value addition are two major grey areas which can create a boom in employment. Our country has not utilized this huge untapped potential. Food processing can reduce huge loss of Rs. 55, 000 crore in foodgrains, fruits and vegetables. Value addition can be done in foodgrains, fruits, vegetables, dairy products, meat, poultry, fish, and medicinal and aromatic plants.

Self-Employment and Entrepreneurship for Agriculture Graduates

In India, there are 44 Agricultural and Veterinary Universities and 5 Deemed Universities which produce more than 21,000 agriculture graduates and post graduates. The agricultural graduates churned out by these institutions should take initiative to set up various smaller commercial ventures to provide the required services for quality production in agriculture and marketing and post-harvest utilization of the surplus produce. In agriculture sector, there is vast scope for business and entrepreneurial opportunities. Efforts towards developing small business would not only help in achieving economic growth but would also create enormous employment opportunities in the field.

The Central Government has launched various schemes to engage unemployed agricultural graduates in setting up such ventures in agriculture sector which will not only accelerate agricultural production with the dissemination of latest technical know how to the farmers but will also provide employment opportunities to lakhs of other unemployed youths. In such ventures, agri-clinics and agri-business centres are most important. The agri-clinics and agri-business centres are envisaged to provide expert services and advice to farmers on cropping practices, technology dissemination, crop protection from pests and diseases, market trends and prices of various crops in the markets and also clinic services for animal health etc., which would

❒ Dr. Harender Raj Gautam, Senior Scientist, Department of Mycology and Plant Pathology, Dr. Y.S.Parmar University of Horticulture and Forestry, Nauni-173230, Solan, Himachal Pradesh.

enhance productivity of crops and animals. Agricultural graduates may choose from a range of high potential areas to set up different ventures related to agri-clinics and agri-business centres. Agricultural graduates who come from farming families and have an aptitude for agriculture can be encouraged to undertake commercial farming on their own or leased land and/or to establish agro-industries and agri-services from which they can earn far higher income rather than seeking salaried employment. Special technical support be provided to these agricultural and agri-business entrepreneurs to help them achieve financial self-sufficiency and high incomes. In order to be effective, the self-employment opportunities must not only be financially remunerative but should also be socially prestigious. This can be achieved by providing special status to these entrepreneurs and according recognition and special awards for high performance.

The Scheme of Agri-Clinic and Agri-Business Centres was launched in 2002 as a follow-up of the Finance Minister's budget speech in 2001. The objective of the scheme is to provide fee-based extension and other services to the farming community as also to create self-employment opportunities for agriculture graduates. The agriculture graduates are provided training in agri-business development for two months in over 67 institutions in public/private sectors located throughout the country and coordinated by the National Institute of Agriculture Extension Management (MANAGE). These institutions also provide handholding support to the trained graduates for a period of one year. The entire cost of training and handholding is being borne by the Government of India. Trained graduates are expected to set up Agri-Clinic and Agri-Business Centres with the help of bank finance. The scheme is being implemented with the help of the Small Farmers Agri-Business Consortium (SFAC), MANAGE and the National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD). The training is open for graduates in agriculture and subjects allied to agriculture like horticulture, sericulture, veterinary sciences, forestry, dairy, poultry farming, fisheries, etc. Now the facility has been extended to youth with agriculture diploma of one year after 10+2 examination. MANAGE publishes advertisements for inviting applications for training in leading newspapers of national and regional importance. After the training, these graduates and diploma holders can start different agri-businesses. Loan up to Rs. 20 lakh is provided by the NABARD and other nationalized banks, out of which around 40 per cent is financial assistance.

- Soil, water, quality and input testing laboratory service centre.
- Plant protection service centre, which can provide services like disease and pest diagnosis, and control services including integrated pest management.
- Seed processing unit.
- Micro-propagation through plant tissue culture laboratories and hardening units.
- Provision of farm advisory and extension consultancy services.
- Setting up of bio-pesticides and bio-control agents units.
- Establishment of hatcheries and production of fish finger-lings for aquaculture.
- Provision of livestock health cover, setting up of veterinary dispensaries and services including frozen semen banks and liquid nitrogen supply.
- Post-harvest management centres for sorting, grading, standardization, storage and packing.

- Establishment of cold storages and cool chain facilities for perishable agricultural produce.
- Small industrial units of farm implements and farm machinery.
- Spawn production laboratories to produce seed for mushroom cultivation.
- Rearing of quality breed animals for milk production and meat production.
- Setting up of hatcheries of poultry birds and rearing of poultry birds for egg and meat production.
- Setting up of retail outlets of farm produce in towns and cities.

Agriculture graduates and diploma holders interested in starting such projects can take financial help from the National Horticulture Mission, Nationalized Banks, NABARD, National Horticulture Board, State Cooperative Banks.

Employment Opportunities for Unemployed Youth

However, there are some projects/ ventures in agriculture which can be taken up by any unemployed youth with some prior training from any State Agricultural University in the country or from different institutes of the Indian Council of Agricultural Research (ICAR) spread over entire length and breadth of our country. Such ventures/ projects are listed below. The Ministry of Agriculture, Government of India, conducts various training programmes ranging from one week to one year duration with the help of State Agricultural Universities, State Departments of Agriculture and different Institutes of ICAR to train unemployed youths in different ventures so that they can start their work. Unemployed youth can form Self-Help Groups (SHGs) which can also play an important role in creation of job opportunities in agriculture. SHGs are a major source of micro credit to the members of the group which can help in timely availability of inputs and sale of the produce. SHGs can provide an effective mechanism for promotion of sustainability and entrepreneurship in agriculture with the help of NABARD and other nationalized and cooperative banks. There are many diversified ventures in agriculture which are suited to almost every region and economic strata of the population. These include:

- Organic farming in vegetable and fruit production.
- Dairy farming, marketing of milk and milk products.
- Cultivation of medicinal and aromatic plants.
- Nursery production in fruits.
- Setting up of poultry farms.
- Feed processing and testing units.
- Setting up of cool chain from the farm level onwards.
- Compost and mushroom production units.
- Setting up of vermiculture units and production of bio-fertilizers.
- Rural marketing outlets for processed agri-products.
- Maintenance, repair and custom hiring of agricultural implements and machinery including micro-irrigation systems (sprinkler and drip).
- Cultivation of different ornamental crops.
- Protected cultivation of vegetables and ornamental crops in polyhouses.
- Setting up of dairy units.

- Fish production in artificial tanks and ponds.
- Mushroom production.
- Setting up of piggeries unit.
- Sericulture units.
- Setting up of apiaries (bee-keeping) and honey and bee products processing units.
- Transportation and marketing of agriculture produce.

Unemployed youths can take financial help/ loan from various other schemes being financed/ sponsored by the Ministry of Agriculture, Government of India, particularly from the National Horticulture Mission, National Horticulture Board, National Medicinal Board, State Departments of Agriculture, Horticulture, Animal Husbandry and Fisheries. Different Nationalized Banks, NABARD and State Cooperative Banks also provide loans for starting various agriculture based projects. ❐

NIOS: A Schooling System with a Difference

The National Institute of Open Schooling (NIOS) was set up as National Open School in 1989 by the Ministry of Human Resource Development, Government of India, as an autonomous organisation. It provides educational opportunities to persons like you who wish to study further and qualify for a better tomorrow. The Mission of NIOS is to provide education to all with special concern for girls and women, rural youth, working men and women, SC and ST, differently abled persons and other disadvantaged persons who because of one or other reason could not continue their education with the formal system. NIOS operates through a network of Eleven Regional Centres and about three thousand Accredited Institutions (AIs) and Accredited Vocational Institutions (AVIs) commonly known as Study Centres in India, Nepal and Middle East Counties. For academic courses, admission is through on-line only.

Globalization Through Education and ICT

❒ Dr. Shruti Upreti

The objective of this paper is to present the emerging trends of globalization with special reference to Education and ICT sector.

Introduction

Globalization: The growing integration of economies and societies around the world is a complex process that is variously affecting different countries and areas and their inhabitants. To some, globalization is an inevitable, technologically-driven process that has been increasing economic and political relations between people of different countries and areas. For them, it is seen not only as a natural phenomenon, but also as something good for the world. To others, there is a much deeper concern about related challenges and possible risks associated with the glkobalization process.

Globalization means different things to different people simply because it is a historic and multidimensional process of socio-economic transformation at many levels of society. To many economists, globalization, at its most basic level, involves growth of international trade and finance. The process includes expansion of foreign direct investment (FDI), multinational corporations, integration of world markets and resulting financial flows.

Too often the focus of globalization is on cross-border flows of trade and capital, but there are other significant movements as well, involving people, *knowledge and technology*. Globalization comprises the following four elements:

- Investment
- Industry
- Information
- Individuals

The movement of people and knowledge/ technology may be seen as the real driver and cause of globalization, generating institutional and social changes that are taking place within and beyond the geographic borders of nation States. Such movements are much more difficult to quantify vis-a-vis the impact of trade and finance flows.

Despite national restrictions on movement of labour, the number of workers moving from country to country in search of better employment opportunities has been growing globally. People are increasingly interacting across borders, not only for commercial reasons, but also in matter of technology, culture and governance. Travelling, Internet and Media have stimulated excessive growth in exchange of ideas and information.

❒ Dr. Shruti Upreti, Lecturer (C.M.D.E.), District Institute of Education and Training (North_East), SCERT, Delhi, E-mail: shruti.pandey18@gmail.com

People today engage more than ever in associations that encompass national borders—from informatl networks to formal organizations.

Globalization is driven by both "push-up" and "push-down" trends. The emergence of the World Economic Forum and certain other international structures such as the World Trade Organization (WTO) and increasing collaboration between the United Nations, WTO, the Bretton Woods institutions and the private sector in the Global Compact reflect globalization from "above". Globalization pulls power from the government down to civil society, but it also pushes power out past national borders to other regions and into the global domain.

Education

Globalization is not a radical revolution that is going to completely transform educaiton. Its impact will be more on emphasis of certain trends. We should always remind ourselves that education must not lose sight of its traditional basci goals: reading, writing, arithmetic, and skill development.

Role of Education in the Globalization Phase

Education: rebuilds social links

Eduation: strives for equitable development of society.

Education: builds a society of autonomous, productive and participative citizens.

Education, at all levels, will continue to grow because it cultivates human mind and makes people useful for all round development of the country.

As to the globalization of knowledge and technology, there is an emerging trend towards development of a "knowledge economy" based on knowledge rather than conventional resource-based economies. The capacity of access inforamtion and transfer it cheaply an dinstantan-eously to individuals who put a high value on that information and are willing to pay for it makes this period of rapid globalization distinctive and opens up many possibilities and certain problems for future.

Globalization of investment, industry, information and individual is proceeding rapidly but it is an uneven process. Not all people and countries are participating in contributing to or benefiting from globalization in a balanced way. The world has just entered a new century and a new age. If the industrial revolution has shaped the destiny of nation in the 20th century, it is the information revolution that is shaping the destiny of human beings in the 21st century. In the knowledge race of the 21st century, every country is increasingly experiencing a global flavour in its educaiton system, and fast track of globalizaiton has boosted increase of transnational higher education during recent years.

India has the third largest higher eduation system in the world next to USA and China. the process of

globalization that has transformed the world, trade, communication and economic relations in the latter part of the 20th century has made profound effect on ecuation.

At the start of the 21st century, student's option for higher education is no longer constrained by national boundaries. Innovative forms of transnational education i.e., Trade in education under the World Trade Organization (WTO) agreement, internet based distance learning, branch campuses and educational 'franchising' have greatly expanded opportunities for students to study and to learn outside their own countries.

In order to meed the challenges of the 21st century and to acquire a competitive edge, the educaiton system of India has to transform to make it more socially relevant and technology oriented. The skills and specialization of graduates produced by our education system should match the real needs of the productive sectors in the market place and the changing needs of our society.

These changes make a heavy demand on the knowledge and the role of teacher has become more significant today. The youth is going to play an important role in the near future. The efficiency of an educated nation depends largely on the efficiency of its young teachers and the educated youths. The need of the hour is to move outside the confines of our walls and reach out to the community through extension education. In this new age, information and communication technology (ICT) has brought about many challenges and opportunities for the education sector.

The Role of ICT for the Social Empowerment and Knowledge

Information and communication technology (ICT) is a key enabler of globalization. It enables an efficient and cost-effective flow of information, products, people and capital across national and regional boundaries. ICT is not a panacea for problem related to rural development. However, it has the potential to help the rural poor to leapfrog some of the traditional barriers to development. Development experiences in and outside this region provide ample evidence that ICT could play a significant role in poverty alleviation programmes.

Modern technology has much to offer in meeting the information communication needs of rural communities. ICT can improve the access of the poor to health, government services, create direct employment opportunities, provide training and education to people and support them in production, storage and marketing of farm and non-farm products. ICT can also facilitate generation and exchange of community-based information and stimulate establishment of small and medium sized

enterprises and expand their market base. It can break barriers to knowledge by providing demand-driven information and services to the rural poor.

Access to information is a key to building human capabilities. The real benefits of ICT lie in its ability to make possible powerful social and economic interventions by making critical information easily available. ICT can also break barriers to participation. The poor are traditionally isolated and lack the maens to take collective action. However, with ICT, poor communities have been empowered to voice their concerns to responsible groups that can take action to help them. The challenges before the developing countries in the region is to develop an appropriate national policy framework that would enable their disadvantaged persons and rural poor. ICT initiatives have demonstrated that these have potential to hep the rural poor to transcend some of the traditional barriers to development.

Conclusion

Technology has touched the life of every one from our grandparents to newborns. It is ICT that is revolutionizing things as nevre before. If you got buy a new car or I-pod you need to know the elements of the new technologies. The influence of all these things has made world highly competitive and filled with opportunities.

Globalization should be viewed as an opportunity and a challenge. In the emerging scenario of knowledge based society across the globe, India is well placed with potential brain needed for revolutionary changes. We cannot remain indifferent to people around us nor shirk from the task of advancing human civilization as a whole to greater unity, greater heights of advancement and for onward march of civilization and human race. We have to set our goals for this objective and plan educational system to produce enlightened and progressive citizen with a global vision.

References

1. Jalan, B., (2002), Globalization: Is it good for India? Excerpts from thirty sixth convocation address at the Indian Statistical Institute, Kolkata, January 15, 2002.
2. UNESCO (2004), Higher Education in a Globalized Society, UNESCO Education Position Paper, UNESCO, Paris, France.
3. Sanyal, B.C. (2005), Trade in Higher Education in the context of WTO's GATS, SEED and MHRD, India.
4. Singh, A., (1985), Redeeming Higher Education, Ajanta Publications, Delhi.
5. Singh and Mehta (1999), declining standard of Higher Educaiton: A University Teacher's View, University News, 23(52), Dec. 27, New Delhi.
6. Srivastava, S.P. (1999) University Education in India: Current Problems and Future Challenges, University News, Vol. 37, No. 18, May 3, New Delhi.
7. Faruqui, M. and Quereshi, A., (1994), Higher Education in India, University News; June 6, pp. 1-9, New Delhi.
8. Dash, N. (2000), Education in India: Problems and Perspectives, New Delhi, Atlantic Publishers and Distributors.
9. Davies, I.K. (1984), 'Management of Learning', McMillan and Company, London.
10. J. Calderhead and P. Gates (Eds) (1993), Conceptualizing Reflection in Teacher Education, London, Palmer Press.
11. Kothari, D.S. ((1966), Report of the Education Commission (1964-1966) Government of India, New Delhi.
12. Hatton, N. and Smith, D. (1995), Reflection in Teacher Educatin towards Definition and Implementation 11, 1, 3349.
13. Linda Morable, Using Active Learning Techniques: Technical Education Division, Richland College, Dallas, Texas.
14. Michael E. Porter, Strategy and the Internet.
15. Mason, R. (1998) Globalization Education: Trends and Issues for Studies in Distance Education, London and New York: Routledge.

Carbon Trading: A Clean Project

❒ Dr. Roofia Khan

Let's rewind to the Kyoto Protocol of 1997 by which all countries are required to reduce their greenhouse gas emissions by 5% from 1990 levels in the next ten years, i.e. by 2012 or pay a price to those that do. The idea was to make developed countries pay for their wild ways with emissions while at the same time rewarding monetarily the countries with good behavior in this regard. Since developing countries can start with clean technologies, they will be rewarded by those stuck with 'dirty' ones. For example, if a company in India can prove that it has prevented the emission of x-tonnes of carbon, it can sell this good carbon-karma to a company in, say, the United States which has a bad karma. An environment-fundamentalist may say it's all a bit like an indulgent epicure paying someone else to diet for him, but then that's another story. Right now, there is a market opportunity for India—but only till 2012. Closer to that clean-up date, prices of carbon credits will rise and in the years leading up to it there will be a scramble to buy credits cheap. The World Bank has built itself a role in this market as a referee, broker and macro-manager of international fund flows. The scheme has been titled "Clean Development Mechanism (CDM)" in 2000 or, more commonly, Carbon Trading.

Carbon Trading may refer to:

(i) Carbon emission trading

(ii) Personal carbon trading

(iii) Emissions trading

Carbon Emission Trading

Carbon emission trading is a form of emissions trading that specifically targets carbon dioxide (calculated in tonnes of carbon dioxide equivalent) and it currently constitutes the bulk of emissions trading.

This form of permit trading is a common method that countries utilize in order to meet their obligations specified by the Kyoto Protocol, namely, the reduction of carbon emissions in an attempt to reduce (mitigate) future climate change.

Personal carbon trading

Personal carbon trading is a general term referring to a number of proposed emissions trading schemes under which emissions credits are allocated to adult individuals on a (broadly) equal per capita basis, within national carbon budgets. Individuals then surrender these credits when buying fuel or electricity. Individuals wanting or needing to emit at a level above that permitted by their initial allocation would be able to purchase additional credits from those using less, creating a profit for those individuals who emit at a level below that permitted by their initial allocation.

Emissions trading

Emissions trading is a market-based approach used to control pollution by providing economic incentives for achieving reductions in the emissions of pollutants.

❒ Dr. Roofia Khan, Secretary-RESEARCH, Anta, Near Mohni School, Shahjahanpur-242001

A central authority sets a limit or *cap* on the amount of a pollutant that can be emitted. The limit or cap is allocated or sold to firms in the form of emissions permits which represent the right to emit or discharge a specific volume of the specified pollutant. Firms are required to hold a number of permits equivalent to their emissions. The total number of permits cannot exceed the cap, limiting total emissions to that level. Firms that need to increase their emission permits must buy permits from those who require fewer permits.

The transfer of permits is referred to as a trade. In effect, the buyer is paying a charge for polluting, while the seller is being rewarded for having reduced emissions. Thus, in theory, those who can reduce emissions most cheaply will do so, achieving the pollution reduction at the lowest cost to society.

There are active trading programs in several air pollutants. For greenhouse gases, the largest is the European Union Emission Trading Scheme. In the United States there is a national market to reduce acid rain and several regional markets in nitrogen oxides. Markets for other pollutants tend to be smaller and more localized.

Carbon Trading arrives in India

When GoodNewsIndia interviewed Dr. U. Shrinivasa for the Bio-diesel story and he held forth on the coming market for Carbon Trading, it had seemed futuristic. But it has already arrived in India with Jindal Vijaynagar Steel declaring itself ready to sell $225 million worth of saved carbon over the next 10 years.

Jindal on Octber 19 said that the Corex furnace technology that it employs would prevent 15 million tonnes of carbon from being discharged into the atmosphere in the coming decade. Jindal says companies from the Netherlands, Canada, United States and Japan have begun talking to it. On Octber 22, the New Indian Express carried a story that said the World Bank had just handed over $10 million to India's Infrastructure Development Finance Company to fund 'clean' projects that would generate saleable carbon credits. The carbon market is here. Dr. Srinivasa had imagined a role for rural India in this emerging market. He said that power generated by naturally grown fuels would yield carbon credits and revenue from their sale should be factored into, when evaluating a bio-diesel future.

❐

Joseph Addison, *1672-1719, English essayist Education is a companion which no misfortune can depress, no crime can destroy, no enemy can alienate, no despostism can enslave. At home a friend, abroad an introduction, in solitude a solace, and in society an ornament, It chastens vice, it guides virtue, it gives, at once, grace and government to genius. Without it, what is man? A splendid slave, a reasoning savage.*

[The Spectator 1711]

भारतीय संविधान की प्रस्तावना

हम, भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व–संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय,

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज, तारीख 26 नवंबर 1949 ई. को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकत, अधिनियम और आत्मार्पित करते हैं।

CONSTITUTION OF INDIA

WE THE PEOPLE OF INDIA, having solemnly resolved to constitute India into a **SOVEREIGN SOCIALIST SECULAR DEMOCRATIC REPUBLIC** and to secure to all its citizens:

JUSTICE, social, economic and political:

LIBERTY of thought, expression, belief, faith and worship;

EQUALITY of status and of opportunity; and to promote among them all

FRATERNITY assuring the dignity of the individual and the unity and integrity of the Nation;

In our constituent assembly this twenty-sixth day of November, 1949, do **HEREBY ADOPT, ENACT AND GIVE TO OURSELVES THIS CONSTITUTION.**

भारत का संविधान

भाग 4अ

नागरिकों के मूल कर्त्तव्य

अनुच्छेद 51अ

मूल कर्त्तव्य–भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह–

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, प्रतिष्ठापित नीतियों, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे,

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में सँजोए रखे और उनका पालन करे,

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे,

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे,

(ड.) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हो,

(च) हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे,

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे,

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे,

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे, और

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाईयों को छू सके।

Constitution of India

Chapter IVA

Fundamental Duties of Citizens

Article 51A

Fundamental Duties - It shall be duty of every citizen of India-

(a) to abide by the Constitution and respect its ideals and institutions, the National Flag and the National Anthem;

(b) to cherish and follow the noble ideas which inspired our national struggle for freedom;

(c) to uphold and protect the sovereignty, unity and integrity of India;

(d) to defend the country and render national service when called upon to do so;

(e) to promote harmony and the spirit of common brotherhood amongst all the people of India transcending religious, linguistic and regional or sectional diversities; to renounce practices derogatory to the dignity of women;

(f) to value and preserve the rich heritage of our composite culture;

(g) to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers, wild life and to have compassion for living creatures;

(h) to develop the scientific temper, humanism and the spirit of inquiry and reform;

(i) to safeguard public property and to abjure violence;

(j) to strive towards excellence in all spheres of individual and collective activity so that the nation constantly rises to higher levels of endeavour and achievement.

Please send your feedback, suggestions and articles
to the Chief Editor, Open Learning at:

विद्याधनम् सर्वधनं प्रधानम्

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

National Institute of Open Schooling
A 24-25, Sector-62, Institutional Area, Noida, U.P.

Published by the Secretary, National Institute of Open Schooling,
A 24-25, Institutional Area, Sector-62, Noida, District Gautam Budha Nagar, U.P.
Printed at: M/s. Gita Offset Printers Pvt. Ltd., C-90, Okhla Industrial Area, Phase-I, New Delhi-20